❀ श्रीवीतरागाय नमः । ❀

बालबोध जैनधर्म

चौथा भाग।

जिसको

गढ़ीअब्दुल्लाखा जिला मुजफ्फरनगरनिवासी,
स्व० बाबू दयाचन्द्र जैन व चावली जिला
आगरानिवासी प० लालाराम शास्त्रीने

बनाया

और

जैन-ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय बम्बई ने
प्रकाशित किया।

पौष वि० सं० १९८५

आठवीं आवृत्ति]　　　*　　　[मूल्य पाँच आने

प्रकाशक
छगनमल बाकलीवाल
मालिक
जैन-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय
हीराबाग, बम्बई।

मुद्रक
बा० कपूरचन्द जैन
महावीर प्रेस, किनारीबाजार—आगरा

निवेदन

(दूसरी आवृत्तिका)

बालबोध जैनधर्म नामक पुस्तकमालाका चौथा भाग पहले एक बार प्रकाशित हो चुका है, अब पुन यह भाग प्रकाशित किया जाता है। इस भागमें 'देवशास्त्रगुरुपूजा' 'पंचपरमेष्ठीके मूलगुण' आदि ११ पाठ हैं, जिनको प्रथम तीन भागोंके अनुसारही पढ़ाना योग्य है।

हमने इस पुस्तकमालाके चारों भागोंमें अत्यन्त सरलताके साथ थोड़े शब्दोंमें जैनधर्मकी कुछ मुख्य मुख्य बातोंका वर्णन किया है। जिनको पढ़कर जैनधर्मका साधारण ज्ञान हो सकता है और रत्नकरण्ड-श्रावकाचार, द्रव्यसंग्रह तत्त्वार्थसूत्र आदि आचार्यो द्वारा प्रणीत शास्त्रोंमें बालक तथा बालिकाओंका अति सुगमतासे प्रवेश हो सकता है और उनके विषयको वे अच्छी तरह समझ सकते हैं।

हमने यथासम्भव इसके सम्पादन तथा संशोधनमें सावधानी रक्खी है। पहली आवृत्ति में भाषा कुछ कठिन हो गई थी उसे भी अबकी बार जहां तक हो सका सरल करदी है और भी उचित परिवर्तन कर दिये हैं। यदि कहींपर कोई अशुद्धि रह गई हो, तो उसे अध्यापकगण कृपया विद्यार्थियोंकी पुस्तकोंमें ठीक करा देवें और हमें भी सूचना देवें कि जिससे अगली आवृत्तिमें ठीक हो जाय।

आपका सेवक

लखनऊ ता० ५-३-१५

दयाचन्द्र गोयलीय बी० ए०

नम सिद्धेभ्य ।

बालबोध जैनधर्म ।

चौथा भाग ।

पहला पाठ ।

देवशास्त्रगुरुपूजा ।

ॐ जय जय जय । नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु ।

गाथा ।

णमो अरहंताण णमो सिद्धाण णमो आयरीयाण ।
णमो उवज्झायाण णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ १ ॥

ॐ अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नम' ।

(यहा पुष्पाञ्जलि चेपण करना चाहिए)

चत्तारि मगल--अरहतमगल, सिद्धमगल, साहूमगल, केवलिपण्णत्तो धम्मो मगल । चत्तारि लोगुत्तमा--अरहत-लोगुत्तमा, सिद्धलोगुत्तमा, साहूलोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारि सरण पव्वज्जामि--अरहतसरण पव्वज्जामि, सिद्धसरण पव्वज्जामि, साहूसरण पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरण पव्वज्जामि ॥

नोट--पूजन करनेसे पहले स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहिनकर तीसरे भागमेंसे एक अथवा दोनों मंगल पढ़ते हुए भगवानका न्हवन (अभिषेक) करना चाहिए । पूजाके [illegible] शुद्ध होनी चाहिए ।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा ।

(यहां पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिए)

अडिल्ल छन्द ।

प्रथमदेव अरहंत, सुश्रुतसिद्धांत जू ।
गुरुनिरग्रंथमहंत, मुकतिपुरपंथ जू ॥
तीन रतन जगमाहिं, सो ये भवि ध्याइये ।
तिनकी भक्तिप्रसाद, परमपद पाइये ॥ १ ॥

दोहा ।

पूजों पद अरहंतके, पूजों गुरपद सार ।
पूजों देवी सरस्वति, नितंप्रति अष्टप्रकार ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठ ठ ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । व० ।

गीताछन्द ।

सुरपति उरग नरनाथ तिनकर, वन्दनीक सुपदप्रभा ।
अति शोभनीक सुवरण उज्जल, देख छवि मोहित सभा ॥
वर नीर क्षीरसमुद्र घट भरि, अग्र तसु बहुविधि नचूं ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रंथ नित पूजा रचूं ॥ १ ॥

दोहा ।

मलिनवस्तु हर लेत सब, जलस्वभावमल छीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि० स्वा० ।

---

१ परिग्रह रहित । २ मोक्षनगरीका रास्ता । ३ सदा, हररोज । ४ आठ तरह । ५ इन्द्र । ६ धरणेंद्र । ७ उत्तम । क्षीरसागर । ९ घड़ा । १० आगे ।

जे त्रिजगउदरमझार प्रानी, तपत अति दुद्धर खरे।
तिन अहितहरण सुवचन जिनके, परमशीतलता भरे॥
तसु भ्रमरलोभित घ्राण पावन सरस चन्दन घसि सचूँ।
अरहत श्रुत सिद्धात गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ॥ २॥

दोहा।

चन्दन शीतलता करे, तपत वस्तु परवीन।
जासों पूजो परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥ २॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्य ससारतापविनाशनाय चदनं नि० स्वा०।

यह भवसमुद्र अपार तारण,-के निमित्त सुविधि ठही।
अतिदृढ परमपावन जथारथ, भक्ति वर नौका सही॥
उज्जल अखंडित सालितदुल-पुज धरि त्रयगुण जचूँ।
अरहत श्रुत सिद्धात गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ॥ ३॥

दोहा।

तदुल सालि सुगंधि अति, परम अखडित बीन।
जासों पूजो परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥ ३॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० स्वाहा।

जे विनयवत सुभव्य-उर-अबुज-प्रकाशन भान हैं।
जे एक मुखचारित्र भाषत, त्रिजगमाहि प्रधान हैं॥
लहि कुदकमलादिक पहुप, भव भव कुवेदनसों बचूँ।
अरहत श्रुत सिद्धात गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ॥ ४॥

---

१ तीनों लोकमें। २ कठिन। ३ दुःखको हरनेवाले, हित करनेवाले। ४ सुगन्ध। ५ उत्तम। ६ श्रेष्ठ। ७ धान। ८ हृदयकमल। ९ सूर्य। १० पुष्प। ११ बुरे दुःख।

दोहा।

विविध भांति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन।
तासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्य कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० स्वाहा।

अतिसबल मद कंदर्प जाको, क्षुधा उरग अमान है।
दुस्सह भयानक तास नाशन,-को सुगरुड समान है॥
उत्तम छहों रसयुक्त नित, नैवेद्य कर घृतमें पचूं।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूं ॥ ५ ॥

दोहा।

नानाविध संयुक्तरस, व्यंजन सरस नवीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्य क्षुधारोगविनाशनाय चरु नि० स्वाहा।

जे त्रिजगउद्यम नाश कीने, मोहतिमिर महाबली।
तिहि कर्मघाति ज्ञानदीप, प्रकाश जोतिप्रभावली॥
इहिभांति दीप प्रजाल कंचन,-के सुभाजनमें खचूं।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूं ॥ ६ ॥

दोहा।

स्वपरप्रकाशक जोती अति, दीपक तमकरि हीन।
जासों पूजो परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि० स्वाहा।

१ सुगन्ध। २ पुष्प। ३ भूख। ४ सर्प। ५ प्रमाण रहित। ६ पकवान वगैरह। ७ घीमें पकाकर। ८ स्वादिष्ट। ९ मोहरूपी अन्धेरा। १० सजाकर। ११ अन्धरा।

जो कर्म-ईंधन दहन, अग्निसमूहसम उद्धत लसै।
वरधूप तास सुगंधिताकरि, सकल परिमलता हँसै॥
इहभाँति धूप चढाय नित, भव ज्वलनमाहि नहीं पचूँ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रंथ नित पूजा रचूँ॥७॥

दोहा।

अग्निमाहि परिमल दहन, चन्दनादि गुणलीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥ ७॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्व०।

लोचन[1] सुरसना घ्राण उर, उत्साहके करतार हैं।
मोपै न उपमा जाय वरणी, सकल फल गुणसार हैं।
सो फल चढावत अर्थपूरन, सकल अमृतरस सचूँ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रंथ नित पूजा रचूँ॥८॥

दोहा।

जे प्रधानफल फलविषैं, पंचकरण[2]रसलीन।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन॥ ९॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व०।

जल परम उज्वल गंध अक्षत[3] पुष्प चरु[4] दीपक करूँ।
वर धूप निर्मल फल विविध, बहुजनमके पातक[5] हरूँ॥
इहभाँति अर्घ चढाय नित, भवि करत शिवपंकति मचूँ[6]।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रंथ नित पूजा रचूँ॥१०॥

---

१ नेत्र। २ पचेंद्रिय। ३ चावल। ४ नैवेद्य। ५ पाप। ६ रचूँ।

दोहा।

चतुविध अर्घ मनोयरूं, अतिउछाहै मन कीन।
जामों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥९॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व०।

जयमाला।

देव शास्त्र गुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार।
भिन्न भिन्न कहुँ आरती, अल्प सुगुणविस्तार ॥१॥

पद्धडी छन्द।

चउकर्मकि त्रेसठ प्रकृति नाशि, जीते अष्टादशदोषराशि। जे परम सुगुण हैं अनत धीर, कहवतके छयालिस गुण गँभीर ॥२॥ शुभ समवशरण शोभा अपार, शतइन्द्र नमत करें शीश धार। देवाधिदेव अरहत देव, वन्दो मनवचतनकरि सुसेव ॥३॥ जिनकी धुनि है ओंकाररूप, निरअक्षरमय महिमा अनूप। दशअष्टमहाभाषासमेत, लघुभाषा सातशतक सुचेत ॥४॥ सो स्यादवादमय सप्तभङ्ग, गणधर गूँथे बारह सुअङ्ग। रवि शशि न हरें सो तम हराय, सो शास्त्र नमों बहु प्रीति ल्याय ॥५॥ गुरु आचारज उवझाय साध, तन नगन रतनत्रय निधि अगाध। ससार देह वैरागधार, निर वाछित पै शिवपदनिहार ॥६॥ गुणछत्तिस पच्चिस आठवीस,

---

१ उत्साह। २ अठारह। ३ समूह। ४ एक सौ। ५ हाथ ६ सात सौ। ७ सूर्य। ८ चन्द्र। ९ सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र।

भवतारनतरन[1] जिहाज ईस । गुरुकी महिमा वरनी न जाय,
गुरुनाम जपो मनवचनकाय ॥ ७ ॥

सोरठा ।

कीजे शक्तिप्रमान, शक्तिबिना सरधा धरै ।
"द्यानत" श्रद्धावान, अजर अमरपद भोगवै ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्व० ।

शान्तिपाठ । *

चौपाई (१६ मात्रा)

शांतिनाथमुख शशिउनहारी[2], सीलगुणव्रतसंजमधारी ।
लखन[3] एकसौआठ विराजैं, निरखत नयन कमलदलैं[4] लाजैं ।
पंचमचक्रवर्तिपदधारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी । इन्द्रनरेन्द्रपूज्य जिननायक, नमो शांतिहित शांतिविधायक ॥
दिव्यविटप[5]पहुपनकी[6] वरषा, दुंदुभि आसन वाणी[7] सरसा।
छत्र चमर भामंडल भारी, ये तुव[8] प्रातिहार्य मनहारी ॥
शांति जिनेश शांतिसुखदाई, जगतपूज्य पूजों सिर नाई ।
परमशांति दीजे हम सबको, पढ़ैं जिन्हें, पुनि चार संघको ॥

---

१ संसारसे तरने और तारनेवाला । २ चन्द्रमाके समान । ३ लक्षण । ४ कमलके पत्ते । ५ अशोकादि कल्पवृक्षके । ६ पुष्पोंकी । ७ दिव्यध्वनि । ८ तुम्हारे ।

* शांतिपाठ बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्पवृष्टि करते जाना चाहिये ।

आये जो जो देवगण, पूजे भक्तिप्रमान।
ते अब जावहु कृपाकर, अपने अपने थान ॥ ४ ॥

प्रश्नावली।

१—पूजनसे क्या समझते हो—और पूजनके लिए किन किन चीजोंकी जरूरत है? पूजामें अष्टद्रव्योंके नाम बताओ।

२—पूजनके पीछे शांतिपाठ क्या पढ़ा जाता है और पूजनके पहले आह्वान क्यों किया जाता है?

३—अर्घ्य किसे कहते हैं और अर्घ्य कब चढ़ाया जाता है?

४—अष्टद्रव्य जो चढ़ाय जाते हैं, वे किसी क्रमसे चढ़ाये जाते हैं या जिसे चाहे उसे पहले चढ़ा देते हैं?

५—पूजा खड़े होकर करना चाहिए या बैठकर? पूजा करने वालोंको सबसे पहले और सबसे अन्तमें क्या करना चाहिए?

६—अष्टद्रव्योंके चढ़ानेके पश्चात् जो जयमाला पढ़ी जाती है उसमें किस बातका वर्णन होता है?

७—अक्षत और फल चढ़ानेके छंद पढ़ो और यह बताओ कि छंद पढ़नेके पश्चात् क्या कहकर द्रव्य चढ़ाना चाहिए?

दूसरा पाठ।

पचपरमेष्ठीके मूलगुण।

परमेष्ठी उसे कहते हैं, जो परमपदमें स्थित हो। ये पांच होते हैं —१ अरहंत, २ सिद्ध, ३ आचार्य, ४ उपाध्याय और ५ सर्वसाधु।

अरहंत उन्हें कहते हैं, जिनके ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय ये चार घातिया कर्म नाश होगए हों। और जिनमें निम्नलिखित ४६ गुण हों और १८ दोष न हों।

दोहा।

चौंतीसों अतिशय सहित, प्रातिहार्य पुनि आठ।
अनंत चतुष्टय गुण सहित, छीयालीसों पाठ॥

अर्थात् ३४ अतिशय, ८ प्रातिहार्य, और ४ अनंत चतुष्टय ये ४६ गुण हैं। ३४ अतिशयोंमेंसे १० अतिशय जन्मके होते हैं, १० केवलज्ञानके हैं और १४ देवकृत होते हैं।

जन्मके दस अतिशय।

अतिशय रूप सुगंध तन, नाहिं पसेव निहार।
प्रियहितवचन अतुल्यबल, रुधिर श्वेत आकार॥
लच्छण सहसरु आठ तन, समचतुष्क संठान।
वज्रवृषभनाराचजुत, ये जनमत दश जान॥

१ अत्यन्त सुन्दर शरीर, २ अति सुगन्धमय शरीर, ३ पसेव रहित शरीर, अर्थात् ऐसा शरीर जिसमें पसीना न आवे, ४ मलमूत्र रहित शरीर, ५ हितमितप्रियवचन बोलना, ६ अतुल्यबल, ७ दूधसमान सुफेद खून, ८ शरीरमें एक हजार आठ लक्षण, ९ समचतुरस्र संस्थान १० और वज्रवृषभ

---

१ अद्भुत बात, ऐसी अनोखी बात जो साधारण मनुष्यों में न पाई जावे २ अनंत। ३ पसीना। ४ जिसकी कोई तुलना न होय। ५ सुडौल सुंदर आकार।

तारोग होतान. ये दश अतिशय अरहंत भगवान्के जन्मसे ही होते हैं। अर्थात् अरहंत भगवानका शरीर जन्मसे ही बड़ा सुन्दर सुडौल होता है। उसमेंसे बड़ी अच्छी सुगंध आती है और उसमें न पसीना आता है, न मलमूत्र होता है। उनके शरीरमें अतुल्य बल होता है। और उनका रक्त सफेद दूध की तरह होता है। वे सबसे मीठे वचन बोलते हैं। उनके शरीरके बाह्य भीतर मल रहित होते हैं और उनमें १००८ लक्षण होते हैं।

वालोंको चारों तरफसे उनका मुह दिखलाई देता है। कोई उनपर उपसर्ग नहीं कर सकता और अदयाका उनमेंसे बिलकुल अभाव हो जाता है। न आहार लेते हैं, न उनकी पलकें झपकती हैं, न उनके बाल और नाखून बढते हैं, और न उनके शरीरकी परछाई पडती है। वे सम्पूर्ण विद्याओं और शास्त्रोंके ज्ञाता हो जाते हैं। ६ कवलाहार (ग्रासवाला) आहार न लेना, ७ समस्तविद्याओंका स्वामीपना, ८ नखकेशोंका न बढना, ९ नेत्रोंकी पलकें न झपकना, १० और शरीरकी छाया न पडना, ये दश अतिशय केवलज्ञान होनेके समय प्रगट होते हैं॥

देवकृत चौदह अतिशय।

देवरचित हैं चारदश, अर्द्धमागधी भाष[1]।
आपसमाहीं मित्रता, निर्मलदिश[2] आकाश॥
होत फूलफल ऋतु सबै, पृथिवी काचसमान[3]।
चरण कमल तल कमल हैं, नभतें[4] जयजयवानें[5]॥
मन्द सुगंध बयारि पुनि, गंधोदककी वृष्टि[6]।
भूमिविषै कण्टक[7] नहीं, हर्षमयी सब सृष्टि॥
धर्मचक्र आगे रहै, पुनि वसुमंगल[8] सार।
अतिशय श्रीअरहंतके, ये चौंतीस प्रकार॥

१ भगवानकी अर्द्ध मागधी भाषाका होना, २ समस्त जीवोंमें परस्पर मित्रताका होना, ३ दिशाओंका निर्मल होना,

---

१ भाषा। २ दिशा। ३ काच, दर्पण। ४ आकाशसे। ५ वाणी। ६ दृष्टा। ७ कांटे, कङ्कर। ८ आठ।

४ आकाशका निर्मल होना, ५ सब ऋतुके फलफूल धान्यादिकका एक ही समय फलना, ६ एक योजन तककी पृथिवीका दर्पणकी तरह निर्मल होना, ७ चलते समय भगवानके चरणकमलोंके तले सुवर्ण कमलका होना, ८ आकाशमें जय जय ध्वनिका होना, ९ मन्द सुगंधित पवनका चलना १० सुगंधमय जलकी वृष्टि होना, ११ पवनकुमार देवोंके द्वारा भूमिका कण्टक रहित होना, १२ समस्त जीवोंका आनन्दमय होना, १३ भगवानके आगे धर्मचक्रका चलना १४ छत्र-चमर ध्वजा घटा आदि आठ मगल द्रव्योंका साथ रहना। इस प्रकार सब मिलाकर ३४ अतिशय अरहंत भगवानके होते हैं। ये अतिशय देवोंके द्वारा होते हैं।

आठ प्रातिहार्य।

तरु अशोकके निकट में सिंहासन छविदार।
तीनछत्र सिरपर लसैं, भामण्डल पिछवार ॥
दिव्यध्वनि मुखतैं खिरैं, पुष्पवृष्टि सुर होय।
ढोरें चौंसठि चमर जख, बाजैं दुन्दुभि जोय ॥

अर्थात्—१ अशोक वृक्षका होना, २ रत्नमय सिंहासन, ३ भगवानके सिरपर तीन छत्रका होना, ४ भगवानके पीठके पीछे भामण्डलका होना, ५ भगवानके मुखसे निरक्षरी (बिना-अक्षरकी) दिव्य ध्वनिका होना, ६ देवोंके द्वारा फूलोंकी

१ पीठ। २ भगवानकी अक्षर रहित सबके समझमें आनेवाली सुन्दर अनुपम वाणी। ३ देवगण। ४ यक्ष जातिके देव।

वर्षा होना, ७ यक्ष देवोंकर चौंसठ चमरोंका ढुरना और ८ दुन्दुभि बाजोंका बजना, ये आठ प्रातिहार्य हैं।

अनन्त चतुष्टय।

ज्ञान अनंत अनंत सुख, दरस अनंत प्रमान।
बल अनन्त अरहन्त सो, इष्टदेव पहिचान॥

१ अनंत दर्शन, २ अनंत ज्ञान, ३ अनन्त सुख, ४ अनन्त वीर्य, ये अनन्त चतुष्टय कहे जाते हैं। इनसे भगवान्‌का ज्ञान, दर्शन, सुख तथा बल अनन्त होता है अर्थात् इतना होता है कि जिसकी कोई सीमा या हद नहीं होती है। इस प्रकार ३४ अतिशय, ८ प्रतिहार्य, ४ अनन्त चतुष्टय सब मिलाकर ४६ गुण होते हैं।

अठारह दोष।

जनम जरा तिरखा छुधा, विस्मय आरत खेद।
रोग शोक मद मोह भय, निद्रा चिन्ता स्वेद॥
राग द्वेष अरु मरणजुत, ये अष्टादश दोष।
नाहि होत अरहन्तके, सो छवि लायक मोष॥

१ जन्म, २ जरा (बुढापा), ३ तृषा (प्यास), ४ क्षुधा (भूख), ५ विसय (आश्चर्य), ६ अरति (पीडा), ७ खेद (दुःख), ८ रोग, ९ शोक, १० मद, ११ मोह (लालच), १२ भय (डर), १३ निद्रा, १४ चिन्ता, १५ स्वेद (पसीना), १६ राग, १७ द्वेष और १८ मरण ये १८ दोष अरहंत भगवानमें नहीं होते हैं।

१ जिसका अन्त न हो। २ बुढापा। ३ आश्चर्य। ४ क्लेश। ५ पसीना। ६ अठारह। ७ मुक्ति।

सिद्ध परमेष्ठीके मूलगुण।

सिद्ध उन्हे कहते हैं जो आठों कर्मोका नाश करके ससारके बन्धनसे सदैवके लिये मुक्त हो गये हैं अर्थात् जो फिर कभी ससारमें न आवेंगे। इनमे नीचे लिखे हुए ८ मूलगुण होते हैं।

सोरठा।

समकित दरसन ज्ञान, अगुरुलघु अवगाहना।
सूक्ष्म वीरजवान, निराबाध गुण सिद्धके॥

इन गुणोंकी परिभाषा समझना इस पुस्तकके पढनेवाले विद्यार्थियोंकी शक्तिसे बाहर है इस लिये केवल नाम दे दिए गए हैं।

१ सम्यक्त्व, २ दर्शन, ३ ज्ञान, ४ अगुरुलघुत्व, अवगाहनत्व, ६ सूक्ष्मत्व, ७ अनन्तवीर्य, ८ अव्याव्याघत्व।

आचार्य परमेष्ठीके मूलगुण।

आचार्य उन्हे कहते है, जिनमे नीचे लिखे हुए ३६ मूलगुण हों। ये मुनियोंके सघके अधिपति होते हैं और उनको दीक्षा तथा प्रायश्चित्त वगैरह दड देते हैं।

द्वादश तप दश धर्मजुत, पालैं पचाचार।
षट् आवशिक त्रिगुप्ति गुन, आचारज पद सार॥

अर्थात्—तप १२, धर्म १०, आचार ५, आवश्यक ६, गुप्ति ३।

---

१ न हलका न भारी। २ एक आत्मा के आकारमें अनेक आत्माओंके आकारोंका रहना। ३ अतीन्द्रियगोचर। ४ बाधा रहित। ५ बारह। ६ छह। ७ तीन गुप्ति। ८ आचार्य।

बारह तप।

अनशन ऊनोदन करै, व्रतसख्या रस छोर।
विविक्तशयन आसन धरै, काय कलेश सुठोर॥
प्रायश्चित धर विनयजुत, वैयाव्रत स्वाध्याय।
पुनि उत्सर्ग विचारकै, धरै ध्यान मन लाय॥

अर्थात्—१ अनशन, (भोजनका त्याग करना), २ ऊनोदर (भूखसे कम खाना), ३ व्रतपरिसख्यान (भोजनके लिये जाते हुए घर वगैरहका नियम करना), ४ रसपरित्याग (छहों रस या एक दो रसका छोडना), ५ विविक्तशय्यासन (एकात स्थानमें सोना बैठना), ६ कायक्लेश (शरीरको कष्ट देना), ७ प्रायश्चित्त (दोषोंका दड लेना), ८ रत्नत्रय व उसके धारकोंका विनय करना, ९ वैयाव्रत अर्थात् रोगी वृद्ध मुनिकी सेवा करना, १० स्वाध्याय करना (शास्त्र पढ़ना), ११ व्युत्सर्ग (शरीरसे ममत्व छोडना) और १२ ध्यान करना।

दश धर्म।

छिमा मारदव आरजव, सत्यवचन चितपागै।
सजम तप त्यागी सरव आकिञ्चन तियत्यागै॥

१ उत्तम क्षमा (क्रोध न करना), २ उत्तम मार्दव (मान न करना), ३ उत्तम आर्जव (कपट न करना), ४ उत्तम सत्य (सच बोलना), ५ उत्तम शौच (लोभ न करना, अन्त:करण-को शुद्ध रखना), ६ उत्तम सयम (छह कायके जीवोंकी दया पालना और पाचों इद्रियोंको व मनको वशमे रखना),

१ क्षमा। २ चित्तको पाक या शुद्ध रखना शौच है। ३ स्त्रीत्याग।

७ उत्तम तप, ८ उत्तम त्याग (दान करना), ९ उत्तम आकिञ्चन (परिग्रहका त्याग करना), १० उत्तम ब्रह्मचर्य स्त्री मात्रका त्याग करना)। छह आवश्यक।

ममता धर वदन करै, नाना थुती बनाय।
प्रतिक्रमण स्वाध्याय जुत, कायोत्सर्ग लगाय॥

१ समता (समस्त जीवोंसे समता भाव रखना), २ वदना (हाथ जोड मस्तकसे लगाकर नमस्कार करना), ३ पचपरमेष्ठीकी स्तुति करना, ४ प्रतिक्रमण (लगे हुए दोषोंपर पश्चात्ताप करना), ५ स्वाध्याय (शास्त्रोंको पढना), ६ कायोत्सर्ग लगाकर अर्थात् खडे होकर ध्यान करना।

पञ्च आचार और तीन गुप्ति।

दर्शन ज्ञान चरित्र तप, वीरज पचाचार।
गोपै मन वच कायको, गिन छतीस गुन सार॥

१ दर्शनाचार, २ ज्ञानाचार, ३ चारित्राचार, ४ तपाचार, ५ वीर्याचार ये पाच आचार हैं।

१ मनोगुप्ति (मनको वशमे करना), २ वचनगुप्ति (वचनको वशम करना), ३ कायगुप्ति (शरीरको वशमे करना), ये तीन गुप्ति हैं।

इस प्रकार सब मिलाकर आचार्यके ३६ मूलगुण हैं।

उपाध्याय परमेष्ठीके २५ मूलगुण।

उपाध्याय उन्हें कहते हैं, जो ११ अग और १४ पूर्वके पाठी हो। ये स्वय पढते और अन्य पासमे रहनेवाले भव्य-

---

१ स्तुति। २ वशमें करें।

जीवोंको पढाते हैं। इनके ११ अंग और १४ पूर्व ये २५ मूलगुण होते हैं।

ग्यारह अङ्ग।

प्रथमहिं आचारांग गनि, दूजो सूत्रकृतांग।
ठाणअंग तीजो सुभग, चौथो समवायांग॥
व्याख्यापण्णति पांचमों ज्ञातृकथा षट् आन।
पुनि उपासकाध्ययन है, अंत:कृतदश ठान॥
अनुत्तरण उत्पाद दश, सूत्रविपाक पिछान।
बहुरि प्रश्नव्याकरण जुत, ग्यारह अंग प्रमान॥

१ आचारांग, २ सूत्रकृतांग, ३ स्थानांग, ४ समवायांग, ५ व्याख्याप्रज्ञप्ति, ६ ज्ञातृकथांग, ७ उपासकाध्ययनांग, ८ अन्त:कृतदशांग, ९ अनुत्तरोत्पादकदशांग, १० प्रश्नव्याकरणांग, और ११ विपाकसूत्रांग। ये ग्यारह अंग हैं।

चौदह पूर्व।

उत्पादपूर्व अग्रायणी, तीजो वीरजवाद।
अस्तिनास्तिपरवाद पुनि, पंचम ज्ञानप्रवाद॥
छट्ठो कर्मप्रवाद है, सतप्रवाद पहिचान।
अष्टम आत्मप्रवाद पुनि, नवमों प्रत्याख्यान॥
विद्यानुवाद पूरव दशम, पूर्वकल्याण महन्त।
प्राणवाद किरियाबहुल, लोकबिन्दु है अन्त॥

१ उत्पादपूर्व, २ अग्रायणीपूर्व, ३ वीर्यानुवादपूर्व, ४ अस्तिनास्तिप्रवादपूर्व, ५ ज्ञानप्रवादपूर्व, ६ कर्मप्रवादपूर्व, ७ सत्प्रवादपूर्व, ८ आत्मप्रवादपूर्व, ९ प्रत्याख्यानपूर्व.

१० विद्यानुवादपूर्व, ११ कल्याणवादपूर्व, १२ प्राणानुवादपूर्व, १३ क्रियाविशालपूर्व, १४ लोकबिन्दुपूर्व ये चौदह पूर्व हैं।

सर्वसाधुके २८ मूलगुण।

साधु उन्हें कहते हैं जिनमें नीचे लिखे हुए २८ मूलगुण हों। वे मुनि तपस्वी कहलाते हैं। उनके पास कुछ भी परिग्रह नहीं होता और न वे कोई आरम्भ करते हैं। वे सदा ज्ञान ध्यानमें लवलीन रहते हैं।

पंच महाव्रत[1]।

हिंसा अनृत[2] तसकरी[3], अब्रह्म[4] परिग्रह पाप।
मनवचतनतें त्यागवो, पंच महाव्रत थाप ॥

१ अहिंसा महाव्रत, २ सत्य महाव्रत, ३ अचौर्य महाव्रत, ४ ब्रह्मचर्य महाव्रत, ५ परिग्रहत्याग महाव्रत।

पंच समिति।

ईर्या भाषा एषणा, पुनि क्षेपण आदान।
प्रतिष्ठापनाजुत क्रिया, पाँचों समिति विधान॥

१ ईर्यासमिति (आलस्यरहित चार हाथ आगे जमीन देखकर चलना), २ भाषासमिति (हितकारी प्रामाणिक मीठे वचन बोलना), ३ एषणासमिति (दिनमें एक बार शुद्ध निर्दोष आहार लेना), ४ आदाननिक्षेपणसमिति (अपने पासके शास्त्र, पीछी, कमंडलु आदिको भूमि देखकर

---

१ हिंसा झूठ, चोरी, मैथुन और परिग्रह इन पांच पापोंके एक देश त्यागको अणुव्रत और सर्वदेश त्यागको महाव्रत कहते हैं। २ झूठ। ३ चोरी। ४ मैथुन, कुशील।

सावधानीसे धरना उठाना), ५ प्रतिष्ठापनसमिति (साफ भूमि देखकर जिसमें जीव जन्तु न हों मल मूत्र करना)।

शेष गुण ।

सपरसं रसना नासिका, नयनं श्रोत्रका रोध ।
षटआवशि मजनं तजन, शयन भूमिका शोध ॥
वस्त्रत्याग कचलुच अर लँघु भोजन इक बार ।
दातन मुखमें ना करें, ठाडे लेंहि अहार ॥

१ स्पर्श, २ रसना, ३ घ्राण, ४ चक्षु, ५ श्रोत्र, इन पाच इंद्रियोंका वशमें करना, ६ समता, ७ वन्दना, ८ स्तुति, ९ प्रतिक्रमण, १० स्वाध्याय, ११ कायोत्सर्ग, १२ स्नानका त्याग करना, १३ स्वच्छ भूमिपर सोना, १४ वस्त्र त्याग करना, १५ वालोंका उखाडना, १६ एक बार थोड़ा भोजन करना, १७ दन्तधावन अर्थात् दातोन न करना, १८ खडे खडे आहार लेना, इस प्रकार ये २८ मूलगुण सर्वसामान्य मुनियोंके होते हैं। मुनिजन इनका पालन करते हैं।

प्रश्नावली ।

१ परमेष्ठी किसे कहते हैं ? परमेष्ठी पाच ही होते हैं या कुछ कमती वढती भी ?

२ पचपरमेष्ठीके कुल गुण कितने हैं ? मुनिके मूलगुण कितने हैं ?
३ जो जीव मोक्षमें हैं, उनके कितने और कौन कौन गुण हैं ?

---

१ स्पर्श । २ आँख । ३ कान । ४ आवश्यक । ५ शरीरको नहीं धोना । ६ और । ७ थोड़ा ।

४ महावीर स्वामी जब पैदा हुए थे, तब उनमें अन्य मनुष्यों से कौन कौन असाधारण बातें थीं ?

५ अतिशय, प्रातिहार्य, आचार्य, गुप्ति, ऊनोदर, आकिंचन्य, प्रतिक्रमण, वज्रऋषभनाराच संहनन, समचतुरस्र संस्थान, व्युत्सर्ग, एषणासमिति, स्वाध्याय इनसे क्या समझते हो ?

६ समिति, महाव्रत, अंग, आवश्यक, और अनन्तचतुष्टयके कुछ भेद बताओ।

७ शयन, स्नान, पान, सोने, खाने, पीने, नहाने, धोने और पहनने आदि नियमोंमें हममें और साधुओंमें क्या भेद है ?

८ आवश्यक, पचाचार, महाव्रत, समिति, प्रातिहार्य किनके होते हैं ?

९ पाठमें आए हुए १८ दोष किसमें नहीं होते ?

१० अरहतके देवकृत अतिशयोंके नाम बताओ। ये अतिशय कब प्रगट होते हैं, केवलज्ञानके पहले या पीछे ?

११ एक लेख लिखो जिसमें यह दिखलाओ कि अरहंत भगवानमें और साधारण मनुष्योंमें बाहरी बातोंमें क्या अन्तर है ?

१२ अरहत मुनि हैं या नहीं ? क्या तमाम मुनियोंके केवलज्ञानके होनेपर केवलज्ञानके अतिशय प्रगट हो जाते हैं या केवल अरहतोंके ?

१३ यदि किसी मुनिसे कोई अपराध हो जाता है, तो वे क्या करते हैं ?

१४ उपाध्याय किनको पढाते हैं और क्या पढाते हैं ?

१५ भगवानकी जो वाणी खिरती है, वह किस भाषामें होती है ? उसको सब कोई समझ सकते हैं या नहीं ?

१६ पचपरमेष्ठीमें सबसे बड़ा पद किसका है और सबसे छोटा किसका ?

१७ आचार्य और साधु इनमें पहले कौनसे पदकी प्राप्ति होती है ?

१८ सिद्ध और अरहतमें क्या भेद है, और किसको पहले नमस्कार करना चाहिए ?

१९ एक पमेष्ठीके गुण दूसरे परमेष्ठी में हो सकते हैं या नहीं और मोक्षमें रहनेवाले जीवोंको पचपरमेष्ठी कह सकते हैं या नहीं ?

तीसरा पाठ।

चौबीस तीर्थंकरोंके नाम चिह्न सहित।

नाम तीर्थंकर	चिह्न	नाम तीर्थंकर	चिह्न
वृषभनाथ	वृषभ (बैल)	विमलनाथ	शूकर (सुअर)
अजितनाथ	हाथी	अनन्तनाथ	सेही
शंभवनाथ	घोड़ा	धर्मनाथ	वज्रदण्ड
अभिनन्दननाथ	बंदर	शांतिनाथ	हरिण
सुमतिनाथ	चकवा	कुन्थुनाथ	बकरा
पद्मप्रभ	कमल	अर नाथ	मच्छ
सुपार्श्वनाथ	साथिया	मल्लिनाथ	कलश
चन्द्रप्रभ	चन्द्रमा	मुनिसुव्रतनाथ	कछुआ
पुष्पदन्त	मगर	नमिनाथ	लाल कमल
शीतलनाथ	कल्पवृक्ष	नेमिनाथ	शंख
श्रेयांसनाथ	गेंडा	पार्श्वनाथ	सर्प
वासुपूज्य	भैंसा	वर्द्धमान	सिंह

प्रश्नावली ।

१ दसवें, पन्द्रहवें, बीसवें और चौबीसवें तीर्थंकरके नाम चिह्न सहित बताओ ?

२ ये चिह्न किन किन और कौनसे तीर्थंकरोंके हैं —घोड़ा, मगर, भैंसा, मच्छ और कछुआ ?

३ उन तीर्थंकरोंके नाम बताओ जिनके चिह्न निर्जीव हैं ?

४ ऐसे कौन कौन तीर्थंकर हैं, जिसके चिह्न असैनी जीवोंके नाम हैं ?

५ हथियार, बाजे, बरतन और वृक्षके चिह्न किन किन तीर्थंकरोंके हैं ? अलग अलग चिह्न सहित बताओ ।

६ एक लड़केने चौबीसों तीर्थंकरोंके चिह्न देखनेके पश्चात् कहा कि कैसी अनोखी बात है कि सबके चिह्न जुदे जुदे हैं, किसीका भी किसीसे नहीं मिलता, बताओ कि उसका कहना सत्य है या नहीं ?

७ क्या सब ही प्रतिमाओंपर चिह्न होते हैं ? जिस प्रतिमापर चिह्न न हो उसे तुम किसकी कहोगे ?

८ यदि प्रतिमाओंपर चिह्न नहीं हों तो क्या कठिनाई होगी ?

९ यदि अजितनाथ भगवानकी प्रतिमापरसे हाथीका चिह्न उठाकर गेंडेका चिह्न बना दिया जावे, तो बताओ उसे कौनसे भगवानकी प्रतिमा कहोगे ?

१० साथिआका आकार बनाओ ।

चौथा पाठ ।

सप्तव्यसन ।

व्यसन उन्हें कहते हैं जो आत्माका स्वरूप ढक देवें तथा आत्माका कल्याण न होने देवें। बुरी आदतको भी व्यसन कहते हैं। व्यसन सेवन करनेवाले व्यसनी कहलाते हैं और लोकमें बुरी दृष्टिसे देखे जाते हैं।

व्यसन सात हैं—१ जुआ खेलना, २ मांस खाना, ३ मदिरापान करना, ४ शिकार खेलना, ५ वेश्यागमन करना, ६ चोरी करना, और ७ परस्त्री सेवन करना।

१ रुपये पैसे और कौड़ियों वगैरहसे नक्की मूठ खेलना और हार जीतपर दृष्टि रखते हुए शर्त लगाकर कोई काम करना जूआ कहलाता है। जूआ खेलनेवाले जुआरी कहलाते हैं। जुआरी लोगोंका हर जगह अपमान होता है। जातिके लोग उनकी निंदा करते हैं और राजा उन्हें दण्ड देता है।

२ जीवोंको मारकर अथवा मरे हुए जीवोंका कलेवर खाना, मांस खाना कहलाता है। मांस खानेवाले हिंसक और निर्दयी कहलाते हैं।

३ शराब, भांग, चरस, गांजा वगैरह नशीली चीजोंका सेवन करना मदिरापान कहलाता है। इनके सेवन करनेवाले शराबी और नशेबाज कहलाते हैं। शराबियोंको धर्म कर्म और भले बुरेका कुछ भी विचार नहीं रहता। ...

ज्ञान नष्ट हो जाता है और विचारशक्ति जाती रहती है। औरोंकी तो क्या बात घरके लोगों तकका भी उनपर विश्वास नहीं रहता।

४ जङ्गलके रीछ, बाघ, सूअर वगैरह स्वच्छंद फिरनेवाले जानवरोंको तथा उड़ते हुए छोटे छोटे पक्षियोंको अथवा और किसी जीवको बन्दूक वगैरह हथियारोंसे मारना शिकार खेलना कहलाता है। इस बुरे कामके करनेवालोंके महान् पापका बंध होता है। इन पापियोंके हाथमें बन्दूक वगैरह देखते ही जङ्गलके जानवर भयभीत हो जाते हैं।

५ वेश्या (बाजारकी औरत) से रमनेकी इच्छा करना, उसके घर आना जाना, अथवा उससे सम्बन्ध रखना, वेश्यागमन कहलाता है। वेश्या व्यभिचारिनी स्त्री होती है। उससे सम्बन्ध रखनेमें व्यभिचारका दोष लगता है। व्यभिचार करनेसे न केवल बुरे कर्मोंका बन्ध होता है, किन्तु अनेक प्रकारके दुःसाध्य रोग भी पैदा हो जाते हैं। इसके सिवाय वेश्यासेवन करनेसे मा बहिन सेवन करनेका पाप लगता है। वसततिलका नामकी वेश्याके साथ विषय सेवन करनेसे एक ही भवमें १८ नातेकी कथा प्रसिद्ध है।

६ प्रमादसे विना दी हुई, किसीकी गिरी हुई, या पडी हुई, या रक्खी हुई, या भूली हुई चीजको उठा लेना अथवा उठाकर किसीको दे देना चोरी है। जिसकी चीज चोरी चली जाती है, उसके मनमें बडा खेद पैदा होता है और इस खेदका कारण चोर होता है। इसके सिवाय चोरी करते

समय चोरके परिणाम भी बडे मलीन होते हैं। इस कारण चोरके महान् अशुभ कर्मोंका बन्ध होता है। लोकमें भी चोर दण्ड पाते हैं और सब कोई उन्हें घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं।

७ अपनी स्त्री अर्थात् जिसके साथ धर्मानुकूल विवाह किया है, उसको छोडकर और सब स्त्रियां मा बहिनके समान हैं। अपनेसे बड़ी मा बराबर हैं और छोटी बहिन बेटीके बराबर हैं। उनके साथ विषय सेवन करना मानो अपनी मा बहिन और बेटीके साथ विषय सेवना है।

प्रश्नावली।

१ व्यसन किसे कहते हैं और ये व्यसन कितने होते हैं ?

२ शतरंज, ताश, गंजफा खेलना, रुई, अफीम वगैरहका सट्टा लगाना, लाटरी डालना, जिंदगीका बीमा करना, पार्टी बनाकर कबड्डी, क्रिकेट, फुटबाल खेलना जूआ है या नहीं ?

३ परस्त्री और वेश्यामें क्या भेद है ? परस्त्रीका त्यागी वेश्याका त्यागी है या नहीं ?

४ मदिरापानसे क्या समझते हो ? भांग, चरस, गांजा मदिरामें शामिल हैं या नहीं ?

५ एक अङ्गरेजने जूनागढके जङ्गलमें एक बड़ा शेर मारा, बताओ उसको पुण्य हुआ या पाप ? यदि पाप हुआ तो कौनसा ?

६ वसंततिलका वेश्याकी कथा कहो। एक ही भवमें १८ नाते कैसे हुए ?

७ सबसे बुरा व्यसन कौनसा है और ऐसे ऐसे कौन कौन व्यसन हैं जिनमें हिंसाका पाप लगता है ?

८ परस्त्रीसेवन करनेसे माता-बहिन सेवन करनेका पाप कैसे लगता है ?

पॉचवॉ पाठ।

अष्ट मूलगुण।

मूलगुण मुख्य गुणोको कहते है। कोई भी पुरुष जब तक मूलगुण धारण नहीं करता है, तब तक श्रावक नहीं कहला सकता है। श्रावक बननेके लिए इनको धारण करना बहुत जरूरी है मूल नाम जडका है। जैसे जडके बिना पेड़ नही ठहर सकता, उसी प्रकार बिना मूलगुणो के श्रावक नहीं हो सकता।

श्रावकके ये आठ मूलगुण है—तीन मकारका त्याग अर्थात् मद्य त्याग, मास त्याग, मधु त्याग और पाच उदुम्बर फलोंका त्याग।

१ शराब वगैरह मादक वस्तुओंके सेवन करनेका त्याग करना मद्यत्याग है। अनेक पदार्थोंको मिलाकर और उनको सडाकर शराब बनाई जाती है। इस कारणसे उसमे बहुत जल्दी असख्याते जीव पैदा हो जाते है और उसके सेवन करनेमे महान् हिंसाका पाप लगता है। इसके सिवाय उसको पीकर आदमी पागलसा हो जाता है, धर्म कर्म सब भूल जाता है, अपने परायेका विचार जाता रहता है, और तो क्या शराबियोंके मुहमे कुत्ते भी मूत जाते हैं इस लिए शराब तथा भंग चरस वगैरह मादक वस्तुओंका त्याग करना ही उचित है।

२ मांस खानेका त्याग करना मांस त्याग कहलाता है। दो इंद्रिय आदि जीवोंके घात करनेसे मास होता है। मांसमे

अनेक जीव सदा पैदा होते और मरते रहते हैं। मासको छूनेसे ही वे जीव मर जाते है। इसलिये जो मास खाता है, वह अनंत जीवोंकी हिंसा करता है। इसके सिवाय मांसभक्षणसे अनेक प्रकारके असाध्य रोग हो जाते है और स्वभाव क्रूर व कठोर हो जाता है। इस कारणसे मासका त्याग करना ही उचित है।

३ शहद खानेका त्याग करना मधुत्याग है। शहद मक्खियोंका वमन (कय) है। इसमें हर समय छोटे छोटे जीव उत्पन्न होते रहते हैं। बहुतसे लोग मक्खियोंके छत्तेको निचोटकर शहद निकालते हैं। छत्तेके निचोडनेमे उसमेंकी मक्खियां और उनके छोटे छोटे बच्चे मर जाते हैं और उनका सारा रस शहदमें आजाता है जिसके देखनेसे ही घिन आती है। ऐसी अपवित्र वस्तु खाने योग्य नहीं हो सकती। उसका त्याग करना ही उचित है।

४–८ बट, पीपर, पाकर, कठूमर (अंजीर) और गूलर इन फलोंका त्याग करना पाच उदुम्बरोंका त्याग करना कहलाता है। इन फलोंमे छोटे छोटे अनेक जीव रहते है। बहुतोंमे साफ साफ दिखाई पडते हैं और बहुतोंमे छोटे होनेसे दिखाई नहीं पडते। इन फलोंके खानेसे ही उनमें रहनेवाले सब जीव मर जाते हैं, इसलिये इनके खानेका त्याग करना ही उचित है।

प्रश्नावली।

१ मूलगुण किसे कहते हैं और ये गुण किसके होते हैं ?
२ मूलगुण कितने होते हैं, नाम सहित बताओ।

३ एक जैनीने सर्वथा जीवहिंसाका त्याग कर दिया, तो बताओ वह इन अष्टमूलगुणका धारी है या नहीं ?

४ मद्यसेवन करनेसे क्या क्या हानियाँ होती हैं ? मांसका त्यागी मद्य सेवन करेगा या नहीं ?

५ क्या सब ही फलोंके खानेमें दोष हैं या केवल बड़ पीपर वगैरह फलोंमें ही ? और क्यों ?

६ मूलगुणोंका धारी व्यसनसेवन करेगा या नहीं ?

छट्ठा पाठ ।

अभक्ष्य ।

जिन पदार्थोंके खानेसे त्रसजीवोंका घात होता हो, अथवा बहुत स्थावर जीवोंका घात होता हो, जो प्रमाद बढानेवाले हों, और जो अनिष्ट हों तथा जो भले पुरुषोंके सेवन करने योग्य नहीं, वे सब अभक्ष्य हैं अर्थात् भक्षण करने योग्य नहीं हैं ।

कमलकी डंडीके समान भीतरसे पोल पदार्थ जिनमें बहुतसे सूक्ष्म जीव रह सकते हैं तथा मुलेठी, बेर, द्रोणपुष्प (एक प्रकारके पेडका फूल), ऊमर, द्विदल[१] आदिके खानेमें मूली, गाजर, ल्हसुन, अदरक, शकरकंदी, आलू, अरवी (गागली, घुईंया) सूरण, तरबूज, तुच्छ फल (जिन फलोंमें

---

१ कच्चे दूधमें कच्चे दहीमें, और कच्चे दूधके जमे हुए दहीकी छाछमें उड़द मूंग, चना, आदि द्विदल (जिसके दो टुकड़े हो सकते हैं) अन्नके मिलानेसे द्विदल बनता है ।

बीज न पडे हों), बिलकुल अनन्तकाय वनस्पति आदि पदार्थोंके खानेमें अनत स्थावर जीवोंका घात होता है।

शराब, अफीम, गाजा, भग, चरस, तमाकू वगैरह प्रमाद बढानेवाली चीजे हैं। भक्ष्य होनेपर भी जो हितकर न हो उन्हें अनिष्ट कहते हैं। जैसे खासीके रोगवालेको बरफी हितकर नहीं है। जिनको उत्तम पुरुष बुरा समझें, उन्हें अनुपसेव्य कहते हैं। जैसे लार, मूत्र आदि पदार्थोंका सेवन। इनके सिवाय नवनीत (मक्खन), सूखे उदवर फल, चमडेमें रक्खे हुए हींग, घी, आदि पदार्थ। आठ पहरसे ज्यादहका सधान (आचार) व मुरब्बा, काजी, सब प्रकारके फूल, अजानफल, पुराने मूग, उडद, वगैरह द्विदलान्न, वर्षाऋतुमें पत्तेवाले शाक और विना दले हुए उड़द मूग वगैरह द्विदल अन्न भी अभक्ष्य है। दही छाछ तथा विना फाडी विना देखी हुई सेम, राजमाष (रोंसा) आदिकी फली आदि भी अभक्ष्य हैं।

प्रश्नावली।

१ अभक्ष्य किसे कहते हैं? क्या सब ही शाक पात अभक्ष्य हैं। यदि कोई महाशय सब्जी मात्रका त्याग कर दे, परन्तु और सब चीजें खाते रहें तो बताओ वे अभक्ष्यके त्यागी हैं या नहीं?

२ अनिष्ट और अनुपसेव्यसे क्या समझते हो? प्रत्येकके दो दो उदाहरण दो।

३ द्विदल क्या होता है? क्या तमाम अनाज द्विदल हैं? यदि नहीं, तो कमसे कम चार द्विदल अनाजोंके नाम बताओ।

४ इनमें कौन कौन अभक्ष्य हैं—बैंगन, दहीबड़ा, पेड़ा, गोभीका फूल, आम, मक्खन, खीरा, कमलगट्टा, आलू, कचालू, सोया, पालक, घी, गाजर, नीबूका आचार, बादाम, चिरोंजीका रायता।

५ कुछ ऐसे अभक्ष्य पदार्थोंके नाम बताओ जिनमें त्रस जीवों की हिंसा होती हो।

६ अभक्ष्य कितने हैं? लोकमें जो बाईस अभक्ष्य प्रसिद्ध हैं, उनके विषयमें तुम क्या जानते हो?

७ अभक्ष्यका त्यागी मूलगुणधारी है या नहीं?

सातवाँ पाठ।

व्रत।

अच्छे कामोंके करनेका नियम करना अथवा बुरे कामोंका छोड़ना, यह व्रत कहलाता है।

ये व्रत १२ होते हैं—अणुव्रत ५, गुणव्रत ३, शिक्षाव्रत ४, इनको उत्तरगुण भी कहते है। इनका पालनेवाला श्रावक कहलाता है।

अणुव्रत।

हिंसा झूठ चोरी वगैरह पांच पापोंका स्थूल रीतिसे एक देश त्याग करना अणुव्रत कहलाता है।

---

१ श्रावक स्थूल रीतिसे पापोंका त्याग करते हैं इस कारण उनके व्रत अणुव्रत कहलाते हैं, मुनि पूर्ण रीतिसे त्याग करते हैं, इसलिये उनके व्रत महाव्रत कहलाते हैं।

अणुव्रत ५ होते हैं —१ अहिंसाणुव्रत, २ सत्याणुव्रत, ३ अचौर्याणुव्रत, ४ ब्रह्मचर्याणुव्रत, और ५ परिग्रहपरिमाणव्रत ।

१ प्रमादसे सकल्पपूर्वक (इरादा करके) त्रस जीवोंका घात नहीं करना, अहिंसा अणुव्रत है। अहिंसाणुव्रती में इस जीवको मारू ऐसे सकल्पसे कभी किसी जीवका घात नहीं करता, न कभी किसी जीवके मारनेका विचार करता है और न वचनसे किसीसे कहता है कि तुम इसे मारो। घर बार बनाने, खेती व्यापार करने तथा शत्रुसे अपनेको बचानेमें जो हिंसा होती है उसका गृहस्थ त्यागी नहीं होता।

२ स्थूल (मोटा) झूठ न तो आप बोलना, न दूसरेसे बुलवाना और ऐसा सच भी नहीं बोलना जिसके बोलनेसे किसी जीवका अथवा धर्मका घात होता हो। भावार्थ-प्रमादसे जीवोंको पीडाकारक वचन नहीं बोलना सो सत्य अणुव्रत है।

३ लोभ वगैरह प्रमादके वशमें आकर विना दिये हुए किसीकी वस्तुको ग्रहण नहीं करना अचौर्य अणुव्रत है। अचौर्यअणुव्रतका धारी दूसरेकी चीजको न तो आप लेता है और न उठाकर दूसरेको देता है।

४ परस्त्रीसेवनका त्याग करना ब्रह्मचर्य अणुव्रत है। ब्रह्मचर्य अणुव्रतका धारी अपनी स्त्रीको छोडकर अन्य सब स्त्रियोंको पुत्री और बहिनके समान समझता है। कभी किसीको बुरी निगाहसे नहीं देखता है।

५ अपनी इच्छानुसार धन, धान्य, हाथी, घोडे, नौकर, चाकर, वर्तन, कपडा वगैरह परिग्रहका परिमाण कर लेना कि मैं इतना रक्खूंगा, बाकी सबका त्याग देना, परिग्रह-परिमाणअणुव्रत है।

गुणव्रत।

गुणव्रत उन्हें कहते हैं, जो अणुव्रतोंका उपकार करें। गुणव्रत ३ हैं.---१ दिग्व्रत, २ देशव्रत, ३ अनर्थदण्डव्रत।

१ लोभ आरंभ वगैरहके त्यागके अभिप्रायसे पूरब पच्छम वगैरह चारो दिशाओंमें प्रसिद्ध नदी, गाम, नगर, पहाड, वगैरहकी हद बांध करके जन्मपर्यन्त उस हद बाहर, न जानेका नियम करना दिग्व्रत कहलाता है। जैसे किसी आदमीने जन्मभरके लिए अपने आने जानेकी मर्यादा उत्तरमे हिमालय, दक्षिणमे कन्याकुमारी, पूर्वमे ब्रह्मदेश और पश्चिममे सिन्धु नदी तक कर ली, अब वह जन्मभर इस सीमाके बाहर नहीं जायगा। वह दिग्व्रती है।

२ घडी, घंटा, दिन, महीना वगैरह नियत समय तक जन्म पर्यन्त किए हुए दिग्व्रतमें और भी संकोच करके किसी ग्राम, नगर, घर, मोहल्ला वगैरह तक आना जाना रख लेना और उससे बाहर न जाना देशव्रत[1] है। जैसे जिस पुरुषने ऊपर लिखी सीमा नियत करके दिग्व्रत धारण किया है, वह यदि ऐसा नियम कर लेवे कि मैं भादोंके महीनेमें

१ कहीं कहीं पर देशव्रतोंको शिक्षाव्रतोंमें लिया है और भोगोपभोगपरिमाणव्रतको दिग्व्रतोंमें।

इस शहरके बाहर नहीं जाऊंगा अथवा आज इस मकानके बाहर नहीं जाऊंगा तो उसके देशव्रत * समझना चाहिये।

३ विना प्रयोजन ही जिन कामोंमे पापका आरंभ हो उन कामोंका त्याग करना, अनर्थदण्डव्रत है। इस व्रतका धारी न कभी किसीको वनस्पति छेदने, जमीन खोदने वगैरह पापके कामोंका उपदेश देता है, न किसीको विष (जहर) शस्त्र (हत्यार) वगैरह हिंसाके उपकरणोंको मांगे देता है, न कषाय उत्पन्न करनेवाली कथाएं सुनता है, न किसीका बुरा विचारता है, और न बेमतलब व्यर्थ जल बखेरता है। और न आग जलाता है। कुत्ता बिल्ली वगैरह जीवोंको भी जो मांस खाते है, नहीं पालता।

शिक्षाव्रत।

शिक्षाव्रत उन्हे कहते हैं जिनसे मुनिव्रत पालन करनेकी शिक्षा मिले।

शिक्षाव्रत ४ हैं—१ सामायिक, २ प्रोषधोपवास, ३ भोगोपभोगपरिमाण, ४अतिथिसंविभाग।

१ मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदना करके नियत समय तक पांचों पापोंका त्याग करना और सबसे

---

* दिग्व्रत और देशव्रतसे यह न समझना चाहिए कि जैनियोंमें बाहर आना जाना अथवा संसारका ज्ञान प्राप्त करना बुरा है। इसका मतलब यह है कि हम अपने लोभ और आरम्भको जिसमें हम फंसे हुए कुछभी आत्मकल्याण नहीं कर सकते हैं, कम करें। केवल अपनी इच्छाओंको कम करना इनका अभिप्राय है। आप चाहे अपने आने जानेका क्षेत्र कितनाही रखलें परन्तु हद उसकी जरूर करलें।

रागद्वेष छोडकर, अपने शुद्ध आत्मस्वरूपमें लीन होना, सामायिक कहलाता है। सामायिक करनेवालेको प्रात काल और सायकाल किसी उपद्रव रहित एकात स्थानमें तथा घर, धर्मशाला अथवा मदिरमें आसन वगैरह ठीक करके सामायिक करना चाहिये कि ससार जिसमें मैं रहता हूँ, अशरणरूप, अशुभरूप, अनित्य, दु खमयी और पररूप है और मोक्ष उससे विपरीत है इत्यादि।

प्रत्येक अष्टमी और चतुर्दशीको समस्त आरम्भ छोडना और विषय कषाय तथा आहार पानीका १६ पहरतक त्याग करना, प्रोषधोपवास कहलाता है। प्रोषध एक बार भोजन करने अर्थात् एकाशनका नाम है। एकाशनके साथ उपवास करना प्रोषधोपवास कहलाता है। जैसे किसी पुरुषको अष्टमीका प्रोषधोपवास करना है, तो उसे सप्तमी और नवमीको एकाशन और अष्टमीको उपवास करना चाहिए और शृगार आरभ, गध, पुष्प (तेल, इतर फुलेल), स्नान, अजन सूघनी वगैरह चीजोंका त्याग करना चाहिए। यह उत्कृष्ट प्रोषधोपवासकी रीति है। व्रती प्रत्येक अष्टमी व चतुर्दशीको कमसे कम एकभुक्त करके भी धर्मध्यान कर सकता है।

३ भोजन, वस्त्र, आभूषण आदि भोगोपभोग वस्तुओंको जन्मपर्यन्त अथवा कुछ कालकी मर्यादा लेकर त्याग करना

१ जो वस्तु एक बारही सेवन करनेमें आती है वह भोग है, जैसे भोजन। और जो वस्तु बार बार भोगनेमें आती है वह उपभोग है जैसे वस्त्र चारपाई स्त्री। कहीं कहीं पर भोगको उपभोग और उपभोगको परिभोग भी कहा है।

भोगोपभोगपरिमाणव्रत है । जो पदार्थ अभक्ष्य हैं अथवा ग्रहण करने योग्य नहीं हैं, उनका तो सर्वथा जन्मपर्यंतके लिए त्याग करना चाहिए और जो भक्ष्य तथा ग्रहण करनेके योग्य हैं, उनका भी त्याग घडी, घंटा, दिन, महीना वर्ष वगैरह कालकी मर्यादा लेकर करना चाहिए ।

४ भक्तिसहित, फलकी इच्छाके विना, धर्मार्थ मुनि वगैरह श्रेष्ठ पुरुषोंको दान देना, अतिथिसंविभाग व्रत है । दान चार प्रकारका है.—१ आहारदान, २ ज्ञानदान, ३ औषधदान, ४ अभयदान ।

१ मुनि, त्यागी, श्रावक, व्रती तथा भूखे, अनाथ विधवाओंको भोजन देना आहारदान है ।

२ पुस्तकें बाटना, पाठशालाएँ खोलना, व्याख्यान देकर धर्म और कर्त्तव्यका ज्ञान कराना ज्ञानदान है ।

३ रोगी पुरुषोंको औषध देना, उनकी चर्या करना औषधदान है ।

४ जीवोंकी रक्षा करना अथवा मुनि, त्यागी और ब्रह्मचारी लोगोंके रहनेके लिए स्थान बनवाना, अंधेरी रातमें सडकोंपर लेम्प जलवाना, चौकी पहरा लगवाना, धर्मात्मा पुरुषोंको दुःख और संकटसे निकालना अभयदान है ।

प्रश्नावली ।

१ व्रत किसे कहते हैं ? व्रतोंके कितने भेद हैं ?

२ अणुव्रत, महाव्रत, भोग, उपभोग, यम[1], नियम, दिग्व्रत,

---

[1] जीवनपर्यंत त्यागको यम और कालकी मर्यादासे त्यागको नियम कहते हैं ।

देशव्रत, और प्रोषध, उपवास, प्रोषधोपवासमें क्या भेद है? उदाहरण देकर समझाओ।

३ इन प्रश्नोंके उत्तर दो —

(क) प्रोषधोपवासके दिन क्या क्या करना चाहिये?

(ख) ग्यारहवीं प्रतिमाधारीके व्रत अणुव्रत हैं या महाव्रत?

(ग) सामायिक कहां और किस समय करना चाहिये और सामायिक करते समय क्या विचार करना चाहिये?

(घ) अनर्थदण्डव्रतका धारी ऐसी पुस्तक पढेगा व सुनेगा या नहीं जिनमें जीवहिंसा और युद्धका कथन हो।

(ङ) पंचाणुव्रतका पालनेवाला कौनसा प्रतिमाका धारी है?

(च) अहिंसाणुव्रतका धारी लड़ाईमें जाकर लड़ेगा या नहीं? मन्दिर, कुआ, तालाब बनवायगा या नहीं? खेती करेगा या नहीं?

(छ) छपी हुई पुस्तकें बांटना, औषधि तथा शिल्पविद्याके लिये रुपया देना ज्ञानदान है या नहीं?

(ज) गुणव्रत तथा शिक्षाव्रत विना अणुव्रतके हो सकते हैं या नहीं? क्या शिक्षाव्रती अणुव्रती है?

(झ) एक पुरुषने यह नियम किया कि मैं एशिया, योरुप, अफरीका, अमरिका, आस्ट्रेलिया अर्थात् पञ्च महाद्वीपोंके बाहर न जाऊंगा तो बताओ उसका यह दिग्व्रत है या नहीं?

(ञ) एक पंडित महाशय विना कुछ लिये दिये विद्यार्थियोंको पढ़ाते हैं तो बताओ वे कौनसा व्रत पाल रहे हैं?

(ट) मिथ्यात्वका नाश करने और ज्ञानका प्रकाश करनेके लिये अकलंकने आपत्ति पड़नेपर झूठ बोलकर अपने प्राणोंकी रक्षा की, बताओ उन्हें झूठका पाप लगा या नहीं?

(ठ) सड़कपर एक पैसा पड़ा था, हरिने उठाकर एक भिखारी-को दे दिया, बताओ हरिने अच्छा किया या बुरा ?

(ड) साफ मालूम है कि अपराधीको फासीकी सजा मिलेगी, किसी सूरतसे उसके प्राण नहीं बच सकते, उसको बचानेके लिये झूठी गवाही देना अच्छा है या बुरा ?

(ढ) एक दुष्टा स्त्री सदा अपने कटु शब्दोंसे अपने पतिका जी दुखाती है बताओ वह कौनसा पाप करती है ?

(ण) एक जुआरी अपना सब रुपया हार जानेके बाद घर आकर अपनी स्त्रीसे कहने लगा कि यदि तुम्हारे पास कुछ रुपया हो तो दे दो। यद्यपि स्त्रीके पास रुपया था, परन्तु जुवेके कारण उसने कह दिया कि मेरे पास तो एक फूटी कौडी भी नहीं, मैं कहा से दू ? बताओ उसने झूठ बोला या सच ?

४ अतिथि सविभागव्रत, अनर्थदण्डव्रत, और परिग्रहपरिमाणाणुव्रतसे क्या समझते हो ? उदाहरण सहित बताओ।

आठवाँ पाठ।

ग्यारह प्रतिमा।

श्रावकोंके ११ दरजे होते हैं, उन्हे ग्यारह प्रतिमा कहते है। श्रावक ऊँचे ऊँचे चढता हुआ एकसे दूसरी, दूसरीसे तीसरी, तीसरीसे चौथी, इसी तरह ग्यारहवीं प्रतिमा तक चढता है और उससे ऊपर चढकर साधु या मुनि कहलाता है। अगली अगली प्रतिमाओंमे पहलेकी प्रतिमाओंकी क्रियाका होना भी जरूरी है।

दर्शनप्रतिमा—सम्यग्दर्शन सहित अतीचार रहित आठ मूलगुणोंका धारण करना और सात व्यसनोंका अतीचार सहित त्याग करना दर्शनप्रतिमा है। इस प्रतिमाका धारी दार्शनिक श्रावक कहलाता है। वह सदा संसारसे उदासीन दृढचित्त रहता है और मुझे इस शुभ कामका फल मिले ऐसी वाछा नहीं रखता।

२ व्रतप्रतिमा—पाच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत, इन १२ व्रतोंका पालना व्रतप्रतिमा है। इस प्रतिमाका धारी व्रती श्रावक कहलाता है।

३ सामायिकप्रतिमा—प्रतिदिन प्रात काल, मध्यान्हकाल और सायकाल अर्थात् सवेर, दुपहर, शामको दो दो घड़ी विधिपूर्वक निरतिचार सामायिक करना सामायिकप्रतिमा है।

---

१ सामायिक करनेकी विधि यह है—पहले पूर्व दिशाकी ओर मुँह करके खड़ा होकर नो बार णमोकार मन्त्र पढ़ दण्डवत् करे, फिर उसी तरफ खड़े होकर तीन दफे णमोकार मन्त्र पढ़ तीन आवर्त और एक नमस्कार (शिरोनति) करे और फिर क्रमसे दक्षिण पश्चिम और उत्तर दिशाकी ओर तीन तीन आवर्त और एक एक नमस्कार करे। अनन्तर पूर्वकी दिशाकी ओर मुँह करके खड़े होकर अथवा बैठकर मन वचन कायको शुद्ध करके पांचों पापोंका त्याग करे, सामायिकपाठ पढ़े किसी मन्त्रका जाप करे अथवा भगवानकी शात मुद्राका या चैतन्य मात्र शुद्ध स्वरूपका अथवा कर्म उदयके रसकी जातिका चिन्तवन करे, फिर अन्तमें खड़ा हो ६ दफे मन्त्र पढ़ दण्डवत् करे। सामायिकका उत्कृष्ट समय ६ घड़ी मध्यम ४ घड़ी और जघन्य २ घड़ी है। २४ मिनटकी एक घड़ी होती है।

४—प्रोषधप्रतिमा—हरएक अष्टमी और चतुर्दशीको १६ पहरका अतीचार रहित उपवास अर्थात् प्रोषधोपवास करना और गृह, व्यापार, भोग, उपभोगकी तमाम सामग्रीका त्याग करके एकांतमें बैठकर धर्मध्यानमें लगना, प्रोषधप्रतिमा है। मध्यम १२ और जघन्य ८ पहरका प्रोषध होता है।

५ सचित्तत्यागप्रतिमा—हरी वनस्पति अर्थात् कच्चे फल फूल बीज पत्ते वगैरहको न खाना सचित्तत्याग प्रतिमा है। जिसमें जीव होते हैं उसे सचित्त कहते हैं। अतएव ऐसे पदार्थको जिसमें जीव हों न खाना सचित्तत्याग प्रतिमा है।

६ रात्रिभोजनत्याग प्रतिमा—कृत कारित अनुमोदनासे और मन वचन कायसे रात्रिमें हरएक प्रकारके आहारका त्याग करना अर्थात् सूरज छिपनेके २ घडी पहलेसे सूरज निकलनेके २ घडी पीछे तक आहार पानीका बिलकुल त्याग करना, रात्रिभोजनत्याग प्रतिमा है।

कहीं कहीं पर इस प्रतिमाका नाम दिवामैथुन त्याग प्रतिमा भी है। अर्थात् दिनमें मैथुनका त्याग करना।

७ ब्रह्मचर्यप्रतिमा—मन वचन कायसे स्त्री मात्रका त्याग करना, ब्रह्मचर्यप्रतिमा है।

८ आरंभत्याग प्रतिमा—मन वचन कायसे और कृत कारित अनुमोदनासे गृहकार्यसम्बन्धी सब तरहकी क्रियाओंका त्याग करना, आरंभत्याग प्रतिमा है। आरंभत्याग प्रतिमावाला स्नान दान पूजन वगैरह कर सकता है।

९ परिग्रहत्याग प्रतिमा—धन धान्यादि परिग्रहको पापका कारणरूप जानते हुए आनदसे उनका छोडना परिग्रहत्याग प्रतिमा है।

१० अनुमतित्यागप्रतिमा—गृहस्थाश्रमके किसी भी कार्यकी अनुमोदना नहीं करना, अनुमतित्याग प्रतिमा है। इस प्रतिमाका धारी उदासीन होकर घरमे या चैत्यालय या मठ वगैरहमे बैठता है। घरपर या और जो कोई श्रावक भोजनके लिए बुलावे उसके यहा भोजन कर आता है। किन्तु अपने मुहसे यह नहीं कहता कि मेरे वास्ते यह चीज बनाओ।

११ उद्दिष्टत्यागप्रतिमा—घर छोडकर वनमे या मठ वगैरहमे तपश्चरण करते हुए रहना, खण्डवस्त्र धारण करना, बिना याचना किये भिक्षावृत्तिसे योग्य उचित आहार लेना उद्दिष्टत्यागप्रतिमा है। इस प्रतिमाधारीके दो भेद हैं — १ क्षुल्लक २ ऐलक। क्षुल्लक अपने शरीरपर छोटी चादर रखते है पर ऐलक लगोटी मात्र रखते हैं।

प्रश्नावली।

१ प्रतिमा किसे कहते हैं? और इसके कितने भेद हैं? नाम सहित बताओ। भगवानकी मूर्तिको भी प्रतिमा कहते हैं, बतलाओ उक्त प्रतिमा शब्दका इससे कुछ सम्बन्ध है या नहीं?

२ प्रतिमाओंका पालन कौन करता है? किसी प्रतिमाके पालन करनेके लिए उससे पहलेकी प्रतिमाओंका पालन करना जरूरी है या नहीं?

३ एक आदमी अभी तक किसी भी प्रतिमाका पालन नहीं करता था परन्तु अब उसने पहली प्रतिमा धारण करली, तो बताओ उसने पहिलेसे क्या उन्नति की ?

४ निम्नलिखित कौन प्रतिमाओंके धारी हैं ? ब्रह्मचारी, पर्वोके दिन प्रोषधोपवास करनेवाला, घरका कोई भी काम न करके तमाम दिन धर्मध्यान करनेवाला, स्त्री मात्रका त्याग करनेवाला, एक लंगोटीके सिवाय और किसी तरहका परिग्रह न रखनेवाला।

५ ये ऊचीसे ऊची कौनसी प्रतिमाओंका पालन कर सकते हैं,-गृहस्थ, स्त्री, पुरुष, पशु, पक्षी।

६ कोट बूट पतलून पहिनते हुए, सोदागिरी करते हुए, रेलमें सफर करते हुए, लदनमें रहते हुए, लडाईके मैदानमें लडते हुए, वकालत, अध्यापकी, वैद्यक, ज्योतिष, सम्पादकी करते हुए, राज्य और न्याय करते हुए, कौनसी प्रतिमाका पालन हो सकता है ?

७ इन प्रश्नोंके उत्तर दो —

(क) सातवीं प्रतिमाधारी स्त्रियोंके बीच खड़ा होकर व्याख्यान दे सकता है या नहीं ?

(ख) दसवीं प्रतिमाधारीको यदि कोई भोजनका बुलावा दे, तो उसके यहा जाय या नहीं ?

(ग) ग्यारहवीं प्रतिमाधारी पाठशाला खुलवा सकता है या नहीं ? उसके लिए रुपया देनेको अनुमोदना करेगा या नहीं तथा रेल, घोड़े गाडी वगैरहमें बैठेगा या नहीं ?

(घ) आठवीं प्रतिमाका धारी मदिर बनानेकी सलाह देगा या नहीं तथा पूजन करेगा या नहीं ?

(ङ) उद्दिष्टत्याग प्रतिमाधारी किसीसे धर्म पुस्तक अर्थात् शास्त्रके लिए याचना करेगा या नहीं ? कोई पुस्तक लिखेगा या नहीं ? रोग हो जानेपर किसीसे उसका जिक्र करेगा या नहीं ?

(च) दूसरी प्रतिमाधारीके लिए तीनों समय सामायिक करना जरूरी है या नहीं ?

(छ) प्लेग आजानेपर पहली प्रतिमाका धारी प्लेगग्रसित स्थानको छोडेगा या नहीं अथवा किसी सबधीके मरनेपर रोयगा या नहीं ?

(ज) जिस स्थानपर कोई जैनी न हो तथा जैनमंदिर न हो, वहा प्रतिमाधारी रहेगा या नहीं ?

(झ) सामायिककी क्या विधि है, इसका करना कौनसी प्रतिमाधारीके लिए आवश्यक है ?

(ञ) सचित्त किसे कहते हैं ? कच्चे फल फूल सचित्त हैं या नहीं ?

(ट) दूसरी प्रतिमाका धारी रातको भोजन करेगा या नहीं ? यदि नहीं तो छटी प्रतिमा रात्रिभोजन त्याग क्यों रक्खी है ?

(ठ) सातवीं प्रतिमाधारी मनुष्य क्या क्या काम करेगा और क्या क्या नहीं करेगा ?

(ड) ग्यारहवीं प्रतिमाधारी श्रावक है या मुनि ? उसके पास क्या क्या वस्तुएँ होती हैं ?

नौवाँ पाठ ।

तत्त्व और पदार्थ ।

तत्त्व सात होते हैं —१ जीव, २ अजीव, ३ आस्रव, ४ बंध, ५ संवर, ६ निर्जरा, ७ मोक्ष ।

जीव ।

जीव उसे कहते हैं, जो जीवे, जिसमें चेतना हो अथवा जिसमें प्राण हों । पांच इंद्रिय, तीन बल (मनबल, वचनबल, कायबल), आयु और श्वासोच्छ्वास, ये दस द्रव्यप्राण तथा ज्ञान दर्शन ये भावप्राण हैं । जिनमें ये पाये जाते हैं वे जीव कहलाते हैं । जैसे मनुष्य, देव, पशु, पक्षी वगैरह ।

अजीव ।

अजीव उसे कहते हैं जिसमें चेतना गुण न हो अथवा जिसमें कोई प्राण न हो । जैसे लकड़ी, पत्थर वगैरह ।

आस्रव ।

आस्रव बंधके कारणको कहते हैं । इसके २ भेद हैं—१ भावास्रव, २ द्रव्यास्रव । जैसे किसी नावमें कोई छेद हो जाय और उसमेंसे उस नावमें पानी आने लगे, इसी प्रकार

---

१ एकइंद्रिय जीवमें स्पर्शन इंद्रिय, आयु कायबल और श्वासोच्छ्वास, ये चार प्राण होते हैं । दोइंद्रिय जीवमें रसना (जिह्वा) इन्द्रिय और वचन बल मिलकर ६ प्राण होते हैं । तीनइंद्रिय जीवमें नासिका (नाक) इन्द्रिय बढ़कर सात प्राण हैं । चारइंद्रिय जीवमें चक्षु (आँख) इन्द्रिय बढ़कर आठ प्राण हैं । पचेंद्रिय असंज्ञी जीवमें कर्ण (कान) इन्द्रिय बढ़कर ९ प्राण हैं । पंचेंद्रिय संज्ञीजीवमें मन मिलाकर पूरे दश प्राण होते हैं । २ अजीवके पुद्गल धर्म, अधर्म, आकाश, काल ५ भेद हैं जिनका कथन तीसरे भागमें आ चुका है ।

आत्माके जिन भावोंसे कर्म आते हैं उन्हें भावास्रव कहते हैं और शुभ अशुभ पुद्गलके परमाणुओंको द्रव्यास्रव कहते हैं।

आस्रवके मुख्य ४ भेद हैं —१ मिथ्यात्व, २ अविरति, ३ कषाय, ४ योग। इन्हीं चार खास कारणोंसे कर्मोंका आश्रव होता है।

१ मिथ्यात्व—संसारकी सब वस्तुओंसे जो अपनी आत्मासे अलग है राग और द्वेष छोडकर केवल अपनी शुद्ध आत्माके अनुभवमें निश्चय करनेको सम्यक्त्व कहते हैं। यही आत्माका असली भाव है, इससे उल्टे भावको मिथ्यात्व कहते हैं। मिथ्यात्वकी वजहसे संसारी जीवमें तरह तरहके भाव पैदा होते हैं और इसीसे मिथ्यात्व कर्म बंधका कारण है। इसके ५ भेद हैं —१ एकांत, २ विपरीत, ३ विनय ४ संशय ५ अज्ञान।

२ अविरति—आत्माके अपने स्वभावसे हटकर और और विषयोंमें लगना अविरति है। छहकायके जीवोंकी हिंसा करना और पांच इंद्रिय और मनको वशमें नहीं करना अविरति है।

३ कषाय—जो आत्माको कषे अर्थात् दुःख दे, वह कषाय है। इसके २५ भेद हैं —अनंतानुबंधी क्रोध, मान,

---

१ वस्तुमें रहनेवाले अनेक गुणोंका विचार न करके उसका एक ही रूप श्रद्धान करना एकांत मिथ्यात्व है। २ उलटा श्रद्धान करना विपरीत मिथ्यात्व है। ३ सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्रकी अपेक्षा न करके सबका बराबर विनय और आदर करना, विनय मिथ्यात्व है। ४ पदार्थोंके स्वरूपमें शंसय (शुबह) रहना संशय मिथ्यात्व है। ५ हित अहितकी परीक्षा किए विना ही श्रद्धान करना अज्ञान मिथ्यात्व है। ६ कषायोंका विशेष कथन आगे कर्मप्रकृतियोंमें किया जायगा।

माया, लोभ, अप्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया, लोभ, सज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुवेद, नपुसकवेद ।

४ योग—मनमें कुछ सोचनेसे या जिह्वासे कुछ बोलनेसे या शरीरसे कोई काम करनेसे हमारे मन, जिह्वा और शरीरमे हलन चलन होता है और इनके हिलनेसे हमारी आत्मा भी हिलती है। यही योग कहलाता है। आत्मामे हलन चलन होनेसे ही कर्मोका आस्रव होता है। योग के १५ भेद हैं—१ सत्य मनोयोग, २ असत्य-मनोयोग, ३ उभय मनोयोग, ४ अनुभय मनोयोग, ५ सत्य-वचनयोग, ६ असत्यवचनयोग, ७ उभय वचनयोग, ८ अनुभय वचनयोग, ९ औदारिक काययोग, १० औदारिक मिश्र काययोग, ११ वैक्रियक काय योग, १२ वैक्रियक मिश्र काय-योग, १३ आहारक काययोग, १४ आहारक मिश्र काययोग, १५ कार्माणयोग ।

इस प्रकार ५ मिथ्यात्व, १२ अविरत, २५ कषाय, १५ योग कुल मिलाकर आस्रवके ५७ भेद है ।

बंध ।

बधके भी दो भेद हैं—१ भावबध, २ द्रव्यबध । आत्माके जिन बुरे भावोंसे कर्मबध होता है, उसको तो भावबध कहते हैं और उन विकार भावोंके कारण जो कर्म-

के पुद्गल परमाणु आत्माके प्रदेशोंके साथ दूध और पानी के समान एकमेक होकर मिल जाते हैं, उसे द्रव्यबंध कहते हैं। मिथ्यात्व अविरति, आदि परिणामोंके कारण कर्म आते हैं और व आत्माके प्रदेशोंके साथ मिल जाते हैं, जैसे धूल उडकर गीले स्पडम लग जाती है।

बंध और आस्रव साथ साथ एकही समयमें होता है तथापि इनमें कार्यकारणभाव है, इस लिए जितने आस्रव हैं उन सबको बंधके कारण समझना चाहिए।

संवर।

आस्रवका न होना अथवा आस्रवका रोकना, अर्थात् नष्ट कर्मोंको नहीं आने देना, संवर है।

जैसे जिस नावमें छेद हो जानेसे पानी आने लगा था अगर उस नावके छेद बंद कर दिये जायँ तो उसमें पानी आना बंद हो जायगा, इसी प्रकार जिन परिणामोंसे कर्म आते हैं व न होने पावें और उनकी जगहमें उनसे उल्टे परिणाम हों, तो कर्मोंका आना बंद हो जायगा। यही संवर है। इसके भी भावसंवर और द्रव्यसंवर दो भेद हैं। जिन परिणामोंसे आस्रव नहीं होता है वे भावसंवर कहलाते हैं और उनसे जो पुद्गल परमाणु कर्मरूप होकर आत्मासे नहीं मिलते हैं उसको द्रव्यसंवर कहते हैं।

यह संवर ३ गुप्ति, ५ समिति, १० धर्म, १२ अनुप्रेक्षा २२ परीषहजय और ५ चारित्रसे होता है अर्थात संवरके गुप्ति, समिति, अनुप्रेक्षा, परीषहजय चारित्र ये ५ मुख्य भेद हैं।

गुप्ति—मन, वचन और कायके हलन चलनको रोकना, ये तीन गुप्ति है।

समिति*—ईर्या, भाषा, एषणा, आदाननिक्षेपण, उत्सर्ग ये पाच समिति हैं।

धर्म—उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, सयम, तप, त्याग, आकिंचन्य, ब्रह्मचर्य ये १० धर्म है।

अनुप्रेक्षा—बार बार चिंतवन करनेको अनुप्रेक्षा कहते है। अनित्य, अशरण, समार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचि, आस्रव, सवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभ, धर्म ये १२ अनुप्रेक्षा है। इनको १२ भावना भी कहते हैं।

१ अनित्यभावना—ऐसा विचार करना कि ससारकी तमाम चीज नाश हो जानेवाली ह, कोई भी नित्य नहीं है।

२ अशरणभावना—ऐसा विचार करना कि जगत्मे कोई शरण नही है और मरणसे कोई बचानेवाला नहीं है।

३ समारभावना—ऐसा चिंतवन करना कि यह ससार असार है, इसम जरा भी सुख नहीं है।

४ एकत्वभावना—ऐसा विचार करना कि अपने अच्छे बुरे कर्मोंके फलको यह जीव अकेला ही भोगता है, कोई सगा साथी नहीं बटा सकता।

५ अन्यत्वभावना—ऐसा विचार करना कि पुत्र स्त्री वगैरह ससारकी कोई भी वस्तु अपनी नहीं है।

---

* समिति और १० धर्मोंका स्वरूप पूर्वमें दिया जा चुका है।

६ अशुचिभावना—ऐसा विचार करना कि यह देह अपवित्र और विनाशनी है, इससे कैसे प्रीति करना चाहिए ?

७ आस्रवभावना—ऐसा चिंतवन करना कि मन वचन कायके हलन चलनसे कर्मोंका आस्रव होता है सो बहुत दुखदाई है, इससे बचना चाहिए।

८ संवरभावना—ऐसा विचार करना कि संवरसे यह जीव संसारसमुद्रसे पार हो सकता है, इसलिए संवरके कारणोंको ग्रहण करना चाहिए।

९ निर्जराभावना—ऐसा विचार करना कि कर्मोंका कुछ दूर होना निर्जरा है, इसलिए इसके कारणोंको जानकर कर्मोंको दूर करना चाहिए।

१० लोकभावना—लोकके स्वरूपको विचार करना कि कितना बड़ा है, उसमें कौन कौन जगह है और किस किस जगह क्या क्या रचना है और उससे संसार-परिभ्रमणकी हालत मालूम करना।

११ बोधिदुर्लभभावना—ऐसा विचार करना कि मनुष्य देह बड़ी कठिनाईसे प्राप्त हुई है, इसको पाकर बेमतलब न खोना चाहिए, किंतु रत्नत्रयको (सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र) धारण करना चाहिए।

१२ धर्मभावना—धर्मके स्वरूपका चिंतवन करना कि इसीसे इसलोक और परलोकके सब तरहके सुख मिल सकते हैं।

परीषह—मुनि लोग कर्मोंकी निर्जरा, और कायक्लेश, करनेके लिये समताभावोंसे जो स्वय दुःख सहन करते हैं उन्हें परीषह कहते है।

परीषह २२ हैं.—क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दश-मसक, नग्न, अरति, स्त्री, चर्या, आसन, शय्या, आक्रोश, वध, याचना, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, मल, सत्कार-पुरस्कार, प्रज्ञा, अज्ञान और अदर्शन।

१ भूखके सहन करनेको क्षुधापरीषह कहते हैं।

२ प्यासके सहन करनेको तृषापरीषह कहते हैं।

३ सर्दीका दु.ख सहन करनेको शीतपरीषह कहते हैं।

४ गर्मीका दुःख सहन करनेको उष्णपरीषह कहते हैं।

५ डास, मच्छर, बिच्छू वगैरह जीवोंके काटनेके दुःख सहन करनेको दंश-मसकपरीषह कहते हैं।

६ नगे रहकर भी लज्जा, ग्लानि और विकार नहीं करनेको नग्नपरीषह कहते हैं।

७ अनिष्ट वस्तुपर भी द्वेष नहीं करनेको अरतिपरीषह कहते हैं।

८ ब्रह्मचर्य्यव्रत भग करनेके लिये स्त्रियोंके द्वारा अनेक उपद्रव होनेपर भी विकार नहीं करना स्त्रीपरीषह है।

९ चलते समय पैरमें कटीली घास कंकर चुभ जानेका दु'ख सहन करना चर्यापरीषह है।

१० देर तक एक ही आसनसे बैठे रहनेका दुःख सहन करना,

११ कंकरीली जमीन अथवा पत्थरपर एक ही करवटसे सोनेका दु:ख सहन करना, शय्यापरीषह है।

१२ किसी दुष्ट पुरुषके गाली वगैरह देनेपर भी क्रोध न करके क्षमा धारण करना, आक्रोशपरीषह है।

१३ किसी दुष्ट पुरुष द्वारा मारे पीटे जानेपर भी क्रोध और क्लेश नहीं करना, वधपरीषह है।

१४ भूख प्यास लगने अथवा रोग हो जानेपर भी भोजन औषधादि वगैरह नहीं मांगना, याचनापरीषह है।

१५ भोजन न मिलने अथवा अंतराय हो जानेपर क्लेश न करना, अलाभपरीषह है।

१६ बीमारीका दु:ख न करना रोगपरीषह है।

१७ शरीरमें कांटा, सुई, कांटे, वगैरहके चुभ जानेका दु:ख सहन करना तृणस्पर्शपरीषह है।

१८ शरीरमें पसीना आजाने अथवा धूल मिट्टी लग जानेका दु:ख सहन करना और स्नान नहीं करना, मलपरीषह है।

१९ किसीके आदरसत्कार अथवा विनय प्रणाम वगैरह न करनेपर बुरा न मानना, सत्कारपुरस्कारपरीषह है।

२० अधिक विद्वान अथवा चारित्रवान हो जानेपर भी मान न करना, प्रज्ञापरीषह है।

२१ अधिक तपश्चरण करनेपर भी अवधिज्ञान आदि न होनेसे क्लेश न करना, अज्ञानपरीषह है।

२२ बहुत काल तक तपश्चरण करनेपर भी कुछ फलकी प्राप्ति न होनेसे सम्यग्दर्शनको दूषित न करना अदर्शनपरीषह है।

चारित्र—आत्मस्वरूपमे स्थित होना चारित्र है। इसके ५ भेद हैं:—सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसापराय, यथाख्यात।

निर्जरा।

कर्मोंका थोडा थोडा भाग क्षय होते जाना निर्जरा है। जैसे नावमे पानी भर गया था, उसे थोडा थोडा करके बाहर फेंकना, इसी प्रकार आत्माके जो कर्म इकट्ठे हो रहे है, उनका थोडा थोडा क्षय होना निर्जरा है। इसके भी दो भेद हैं—१ भावनिर्जरा, २ द्रव्यनिर्जरा। आत्माके जिस भावसे कर्म अपना फल देकर नष्ट होता है वह भावनिर्जरा है और समय पाकर तपसे नाश होना द्रव्यनिर्जरा है।

मोक्ष।

सब कर्मोंका क्षय हो जाना मोक्ष है। जैसे एक नावका भरा हुआ पानी बाहर फेंका जाय तो ज्यों ज्यों उसका

---

१ सब जीवोंमें समताभाव रखना, सुखदु:खमें समान रहना, शुभअशुभ विकल्पोंका त्याग करना, सामायिक चारित्र है। २ सामायिकसे डिग जानेपर फिर अपनेको अपनी शुद्ध आत्माके अनुभवमें लगाना तथा व्रतादिकमें भग पड़ने पर प्रायश्चित्त वगैरह लेकर सावधान होना छेदोपस्थापना चारित्र है। ३ रागद्वेषादि विकल्पोंका त्यागकर अधिकताके साथ आत्मशुद्धि करना परिहारविशुद्धि चारित्र है। ४ अपनी आत्माको कषायसे रहित करते करते सूक्ष्मलोभ कषाय नाम मात्रको रह जाय उसको सूक्ष्मसापराय कहते हैं। इसके भी दूर करनेकी कोशिश करना सूक्ष्मसापराय चारित्र है। ५ कषाय रहित जैसा निष्कंप आत्माका शुद्ध स्वभाव है, वैसा होकर उसमें मग्न होना, यथाख्यात चारित्र है।

पानी बाहर फेंका जाता है त्यों त्यों वह नाव ऊपर आती जाती है यहां तक कि बिलकुल पानीके ऊपर आ जाती है, इसी प्रकार सवरपूर्वक निर्जरा होते होते, जब सब कर्मोंका क्षय हो जाता है और केवल आत्माका शुद्ध स्वरूप रह जाता है, तभी यह आत्मा ऊर्द्धगमनस्वभाव होनेसे तीनों लोकके ऊपर जा विराजमान होता है और इसीका नाम मोक्ष है।

पदार्थ।

इन्हीं सात तत्वोंमे पुण्य और पाप मिलानेसे ९ पदार्थ कहलाते है।

पुण्य।

पुण्य उसे कहते हैं जिसके उदयसे जीवोंको इष्ट वस्तु सुखसामग्री वगैरह मिले। जैसे किसी आदमीको व्यापारमे खूब लाभ हुआ, घरमे एक पुत्र भी पैदा हुआ और पढ लिखकर उच्चपदपर नियत हुआ, ये सब पुण्यके उदयसे समझना चाहिए।

पाप।

पाप उसे कहते है कि जिसके उदयसे जीवोंको दुःख देनेवाली चीजें मिलें। जैसे कोई रोग हो गया अथवा पुत्र मर गया अथवा धन चोरी चला गया, ये सब पापके उदयसे समझना चाहिये।

विद्या और जातिकी बढ़वारी करना, परोपकार करना, धर्मका पालन करना ऐसे कामोंसे पुण्यका बंध होता है

और जुआ खेलना, झूठ बोलना, चोरी करना, दूसरेका बुरा विचारना ऐसे बुरे कामोंसे पापका बंध होता है।

प्रश्नावली।

१ प्राण कितने होते हैं? जीवमें ही होते हैं या अजीव में भी? देव, पंचेंद्रिय, असेनी, तिर्यंच, वृक्ष, नारकी, स्त्री, मक्खी और चींटीके कौन कौन प्राण हैं?

२ प्राणरहित पदार्थोंके कितने भेद हैं नाम सहित बताओ?

३ भावास्रव, द्रव्यास्रव तथा भावनिर्जरा, द्रव्यनिर्जरामें, क्या भेद है, उदाहरण देकर बताओ तथा यह भी बताओ कि जहा भावास्रव होता है वहा द्रव्यास्रव होता है या नहीं?

४ बंध किसे कहते हैं? इसके कौन कौन कारण हैं और ऐसे कौन कौन कारण हैं जिनसे बंध नहीं होता?

५ निर्जरा और मोक्षमें क्या फरक है? पहले निर्जरा होती है या मोक्ष?

६ मिथ्यात्व, योग, गुप्ति, आदाननिक्षेपणसमिति, अनुप्रेक्षा, चारित्र, अदर्शनपरीषहजय, लोकभावना, संशयमिथ्यात्वसे क्या समझते हो?

७ बताओ इन साधुओंने कौन परीषह सहन की?

(क) एक तपस्वी गर्मीके दिनोंमें दोपहरके समय एक पहाड़पर ध्यान लगाये बैठे हैं। प्याससे गला सूख गया है, ढाई घंटे हो गये हैं, बराबर एक ही आसनमे बैठे हैं।

(ख) सुकमालका आधा शरीर गीदड़ीने खा लिया।

(ग) एक मुनि महाराजको एक दुष्ट राजाने पकड़वाकर कैदमें डलवा दिया, वहापर एक सापने उन्हें काट खाया।

(ग) जिस समय रामचन्द्रजी ध्यानारूढ़ थे, सीताके जीवने स्वर्गसे आकर अपने मनके हावभावसे उनको मोहित करनेकी बहुत कुछ कोशिश की, मगर वे अपने ध्यानसे विचलित न हुए।

(ङ) एक साधु ध्यानपरस्त खड़े थे, कुछ शरावियोंने आकर उनको गालियां दीं और उनपर पत्थर बरसाये।

(च) राजा श्रेणिकने एक मुनिके गलेमें मरा हुआ सांप डाल दिया था जिसके सम्बन्धसे बहुतसे कीड़े मकोड़े उनके शरीरपर चढ़ गये।

(छ) एक तपस्वीको सुजाकका रोग हो गया जिससे उसके शरीरमें बड़े बड़े जख्म (फोड़े) हो गये, परन्तु उन्होंने किसीसे दवा नहीं मांगी।

८ निम्न लिखित प्रश्नोंके उत्तर दो—

(क) जीवतत्त्वका और तत्त्वोंसे क्या सम्बन्ध है और कब तक है?

(ख) क्या कभी ऐसी हालत हो सकती है कि जब आस्रव और बंध बिलकुल न हों, केवल निर्जरा हो हो।

(ग) बंध जो कहनेमें आता है, सो किस चीजका होता है?

(घ) संवरभावनामें क्या चितवन किया जाता है?

(ङ) यथाख्यातचारित्रीके आस्रव और बंध होते हैं या नहीं?

(च) पहले आस्रव होता है या बंध?

(छ) परीषह कौन सहन करते हैं और एक समयमें एक ही परीषह सहन होती है या ज्यादह भी?

९ पुण्य पाप किसे कहते हैं और कैसे कैसे काम करनेसे वे होते हैं?

१० निम्नलिखित कामोंमें पुण्य होगा या पाप ?

(क) एक मनुष्यने एक शहरमें जहां १० मंदिर थे और उनमें से दो चार खंडहर हो गये थे और दो तीनमें पूजा प्रक्षालनका भी कोई प्रबंध न था, वहां अपना नाम करनेके लिए ग्यारहवां मंदिर बना दिया और पूजनके लिए चार रुपये महीनेका पुजारी नौकर रख लिया।

(ख) एक सेठ हररोज बड़े मग्न भावोंसे दर्शन, पूजा, सामायिक स्वाध्याय करते हैं।

(ग) एक धनीने एक दूरके गांवके टूटे फूटे मंदिरको ठीक कराया और किसीको भी यह जाहिर नहीं किया कि हमने इतना रुपया यहां लगाया है।

(घ) एक जैनीने पूरे ९००० कलदारमें अपनी बेटीको बेचकर रथ चलाया और सिंघई पदवी प्राप्त की।

(ङ) यह विचारकर रिश्वत (घूंस) लेना कि इसको धर्मके कामोंमें लगावेंगे।

(च) एक पंडित महाशय किसी बातको न समझ सके, उन्होंने यह तो नहीं कहा कि मैं इसे नहीं समझता हूं, किंतु उलटी तरहसे समझा दिया।

(छ) एक विद्यार्थीने पुस्तकोंके लिए अपने माता पितासे कुछ दाम मांगे, परन्तु उन्होंने देनेसे इन्कार किया, विद्यार्थीने दूकानदारोंके पैसे चुराकर पुस्तक मोल ले ली।

(ज) [illegible], [illegible] पर्वके दिन कुछ भी न [illegible] और [illegible], [illegible] बहाकोंकी वैयावृत्ति करेंगे, धर्मके लिए [illegible], बात बड़ोंको न पहिचाने, [illegible] [illegible], [illegible] मनुष्योंके साथ [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] करेंगे, देवके लिये [illegible]

विद्या उपार्जन करने लिये परदेशोंमें जानेमें, भूखे दुखी निर-नेम, विद्यार्थियोंको वजीफा देकर पढ़ानेमें, अनाथ भाई बंधुओंके मरनेपर उधार लेकर भाइयोंको लड्डू खिलानेमें, बच्चोंकी छोटी उमरमें शादी करनेमें, कमाईके रुपयोंको व्यर्थ खर्च करनेमें, बेटीका रुपया लेकर अयोग्य वरसे व्याहनेमें, मालादारियोंमें दवापनेका पुस्तक बांटनेमें, स्त्रियोंको पढ़ानेमें।

दशवाँ पाठ।

कर्मोंकी उत्तर प्रकृतियां।

कर्मकी मूल प्रकृतियां ८ हैं और उत्तर प्रकृतियां १४८ हैं। ज्ञानावरणकी ५, दर्शनावरणकी ९, वेदनीयकी २, मोहनीयकी २८, आयुकी ४, नामकी ९३, गोत्रकी २ और अन्तरायकी ५।

ज्ञानावरणकर्म—मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मनःपर्ययज्ञानावरण और केवलज्ञानावरण ये पांच ज्ञानावरणकर्मके भेद अथवा प्रकृतियां हैं।

१ मतिज्ञानावरण उसे कहते हैं जो मतिज्ञानको न होने दे अथवा मतिज्ञानका आवरण या घात करे।

२ श्रुतज्ञानावरण उसे कहते हैं जो श्रुतज्ञानका घात करे।

---

१ इन्द्रियों तथा मनसे जो कुछ जाना जाता है उसे मतिज्ञान कहते हैं।

२ मतिज्ञानसे जानी हुई वस्तुके सम्बन्धसे अन्य बातको जानना श्रुतज्ञान है। ये दोनों ज्ञान चाहे ज्यादह चाहे कम हरएक जीवके होते हैं।

३ अवधिज्ञानावरण उसे कहते हैं जो अवधिज्ञानका घात करे।

४ मन पर्ययज्ञानावरण उसे कहते हैं जो मन पर्यय ज्ञानका घात करे।

केवलज्ञानावरण उसे कहते हैं जो केवलज्ञानका घात करे।

दर्शनावरणकर्म—चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधिदर्शनावरण, केवलदर्शनावरण, निद्रा, निद्रानिद्रा, प्रचला, प्रचलाप्रचला, और स्त्यानगृद्धि, ये ९ दर्शनावरण-कर्मकी प्रकृतियां हैं।

चक्षुदर्शनावरण उसे कहते हैं जो चक्षुदर्शन (आंखोंसे देखना) न होने दे।

अचक्षुदर्शनावरण उसे कहते हैं जो अचक्षुदर्शन न होने दे।

अवधिदर्शनावरण उसे कहते हैं जो अवधिदर्शन न होने दे।

केवलदर्शनावरण उसे कहते हैं जो केवलदर्शन न होने दे।

---

१ बिना इन्द्रियोंकी सहायताके आत्मीय शक्तिसे रूपी पदार्थोंके जानने को अवधिज्ञान कहते हैं। यह पंचेन्द्रिय संज्ञी जीवके ही होता है। २ बिना इन्द्रियोंकी सहायताके दूसरेके मनकी बात जान लेनेको मन पर्ययज्ञान कहते हैं। यह ज्ञान मुनिके ही हो सकता है। ३ लोक अलोककी, भूत भविष्यत् और वर्तमान कालकी सर्व वस्तुओंको और उनके सर्व गुण पर्यायों (हालतों) को एक साथ एक कालमें बिना इन्द्रियोंकी सहायताके आत्मीय शक्तिसे जाननेको केवलज्ञान कहते हैं। केवलज्ञानीके ज्ञानसे कोई वस्तु बची नहीं रहती। ४ आंखके सिवाय बाकी इन्द्रियों तथा मनसे किसी वस्तुको . .) को देखना।

निद्रा उसे कहते है जिसके उदयसे नींद आवे।

निद्रानिद्रा उसे कहते है जिसके उदयसे पूरी नींद लेकर भी फिर सोवे।

प्रचला उसे कहते हैं जिसके उदयसे बैठ बैठे ही सो जाय अर्थात् सोता भी रहे और कुछ जागता भी रहे।

प्रचलाप्रचला उसे कहते है जिसके उदयसे सोते हुए मुखसे लार बहने लगे और कुछ आगोपाग भी चलते रह।

स्यानगृद्धि उसे कहते है जिसके उदयसे नींदमे ही अपनी शक्तिसे बाहर कोई भारी काम करले और जागनेपर मालूम भी न हो कि मैंने क्या किया है।

वेदनीयकर्म—*सातावेदनीय और असातावेदनीय*, ये दो वेदनीयकर्मके भेद है। इनके दूसर नाम सद्वेद्य और असद्वेद्य है।

सातावेदनीय उसे कहते है जिसके उदयसे इन्द्रियजन्य सुख हो।

असातावेदनीय उसे कहते हैं जिसके उदयसे दु ख हो।

मोहनीयकर्म—मोहनीय कर्मके मूल दो भेद है।

१ दर्शनमोहनीय, २ चारित्रमोहनीय।

दर्शनमोहनीय उसे कहते हैं जो आत्माके सम्यग्दर्शन[१] गुणका घात करे।

चारित्रमोहनीय उसे कहते हैं जो आत्माके चारित्र गुणका घात करे।

---

१ तत्त्वोंके सच्चे श्रद्धान यानी यकीन करनेको सम्यग्दर्शन कहते हैं।

दर्शनमोहनीयके ३ भेद हैं—मिथात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्प्रकृति।

मिथ्यात्व उसे कहते हे जिसके उदयसे जीवके यथार्थ तत्वोका श्रद्वान न हो।

सम्यग्मिथ्यात्व उसे कहते हे जिसके उदयसे मिले हुए परिणाम हो जिनको न तो सम्यक्त्वरूप ही कह सकते हैं और न मिथ्यात्वरूप।

सम्यक्प्रकृति उसे कहते हैं जिसके उदयसे यथार्थ तत्वोका श्रद्वान चलायमान या मलिनरूप हो जाय।

चारित्रमोहनीयके २ भेद है—कषाय और नोकषाय।

कषायमोहनीयके १६ भेद हैं—अनतानुबन्धी क्रोध, अनतानुबन्धी मान, अनन्तानुबन्धी माया, अनन्तानुबन्धी लोभ, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, अप्रत्याख्यानावरण मान, अप्रत्याख्यानावरण माया, अप्रत्याख्यानावरण लोभ, प्रत्याख्यानावरण क्रोध, प्रत्याख्यानावरण मान, प्रत्याख्यानावरण माया, प्रत्याख्यानावरण लोभ, सञ्ज्वलनक्रोध, सञ्ज्वलनमान, सञ्ज्वलनमाया, सञ्ज्वलनलोभ।

अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ, उन्हे कहते है जो आत्माके सम्यग्दर्शन गुणका घात करें। जब तक ये कषाय रहती है सम्यग्दर्शन नहीं होता।

अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया लोभ उन्हें कहते हैं जो आत्माके देशचारित्रको घातें अर्थात् जिनके उदयसे श्रावकके १२ व्रत पालन करनेके परिणाम न हों।

प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ उन्हे कहते हैं जो आत्माके सकलचारित्रको घाते अर्थात् जिनके उदयसे मुनियोंके व्रतपालन करनेके परिणाम न हों।

सञ्ज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ उन्हें कहते हैं जो आत्माके यथाख्यातचारित्रको घाते अर्थात् जिनके उदयसे चारित्रकी पूर्णता न हो।

नोकषाय (किंचित्कषाय) के ९ भेद हैं—हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुवेद, नपुंसकवेद।

हास्य उसे कहते हैं जिसके उदयसे हंसी आवे।

रति उसे कहते हैं जिसके उदयसे प्रीति हो।

अरति उसे कहते हैं जिसके उदयसे अप्रीति हो।

शोक उसे कहते हैं जिसके उदयसे सनाप हो।

भय उसे कहते हैं जिसके उदयसे डर लगे।

जुगुप्सा उसे कहते हैं जिसके उदयसे ग्लानि उत्पन्न हो।

स्त्रीवेद उसे कहते हैं जिसके उदयसे जीवके पुरुषसे रमनेके भाव हों।

पुंवेद उसे कहते हैं जिसके उदयसे स्त्रीसे रमनेके भाव हों।

नपुंसकवेद उसे कहते हैं जिसके उदयसे स्त्री पुरुष दोनोंसे रमनेके परिणाम हों।

इस प्रकार १६ कषाय, ९ नोकषाय, ये २५ चारित्र-मोहनीयकी और ३ दर्शनमोहनीयकी कुल मिलाकर २८ मोहनीय कर्मकी प्रकृतियां हैं।

आयुकर्म—आयुकर्मके चार भेद हैं—नारकआयु, तिर्यंचआयु, मनुष्यआयु, देवआयु।

नरकआयु उसे कहते है जो जीवको नारकीके शरीरमे रोक रक्खे।

तिर्यंचआयु उसे कहते है जो जीवको तिर्यंचके शरीरमे रोक रक्खे।

मनुष्यआयु उसे कहते है जो जीवको मनुष्यके शरीरमे रोक रक्खे।

देवआयु उसे कहते हैं जो जीवको देवके शरीरमें रोक रक्खे।

नामकर्म—इस कर्मकी ९३ प्रकृतिया हैं—

४ गति (नरक, तिर्यंच, मनुष्य, देव)—इस गति नामकर्मके उदयसे जीवका आकार नारक, तिर्यंच, मनुष्य और देवके समान बनता है।

५ जाति—एकइंद्रिय, दोइन्द्रिय, तीनइन्द्रिय, चारइंद्रिय, पाचइन्द्रिय,—इस जाति नाम कर्मके उदयसे जीव एकइंद्रिय आदि शरीरको धारण करता है।

शरीर * (औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्माण)—इस शरीर नामकर्मके उदयसे जीव औदारिक आदि शरीरको धारण करता है।

---

*औदारिक शरीर स्थूल शरीरको कहते हैं यह शरीर मनुष्य तिर्यंचों के होता है। वैक्रियक शरीर देव, नारकी और किसी किसी ऋद्धिधारी मुनिके भी होता है। इस शरीरका धारी अपने शरीरको जितना चाहे घटा बढ़ा

३ आगोपाग (औदारिक, वैक्रियक, आहारक,)—इस नाम कर्मके उदयसे हाथ, पैर, सिर, पीठ वगैरह अग और ललाट, नासिका वगैरह उपागका भेद प्रगट होता है।

४ निर्माण *—इस नाम कर्मके उदयसे आगोपागकी ठीक ठीक रचना होती है।

५ बधन (औदारिक, वैक्रियक आहारक, तैजस, कार्माण)—इस नाम कर्मके उदयसे औदारिक आदि शरीरोंके परमाणु आपसमे मिल जाते है।

६ सघात (औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्माण)—इस नाम कर्मके उदयसे औदारिक आदि शरीरोंके परमाणु विना छिद्रके एकरूपमे मिल जाते ह।

७ सस्थान (समचतुरस्रसस्थान, न्यग्रोधपरिमण्डल सस्थान, स्वातिसस्थान, कुब्जकसस्थान, वामनसस्थान,

---

सकता है और अनेक प्रकारके रूप धारण कर सकता है। आहारक शरीर छट्ठे गुणस्थानवर्ती उत्तम मुनियोंके होता है। जिस समय मुनिको कोई शंका होती है उस समय उनके मस्तकसे एक हाथका पुरुषके आकारका सफेद रंगका पुतला निकलता है और केवली या श्रुतकेवलीके पास जाता है पास जाते ही मुनिकी शका दूर हो जाती है और पुतला वापिस आकर मुनिके शरीरमें प्रवेश हो जाता है यही आहारक शरीर कहलाता है। तैजस शरीर वह है जिसके उदयसे शरीरमें तेज बना रहता है। कार्माण शरीर कर्मोंके पिण्डको कहते हैं। तैजस, कार्माण ये दोनों शरीर हरएक ससारी जीवके हैं।

* निर्माण नामकर्मके २ भेद हैं —१ स्थाननिर्माण, प्रमाणनिर्माण। स्थान निर्माण नामकर्मसे आगोपागकी रचना ठीक ठीक स्थानपर होती है और प्रमाण निर्माण नामकर्मसे आगोपागकी रचना ठीक ठीक नापसे होती है।

हुडकसस्थान)—इस नामकर्मके उदयसे शरीरकी आकृति यानी शकल सुरत बनती है।

समचतुरस्रसस्थान नामकर्मके उदयसे शरीरकी आकृति ऊपर नीचे तथा बीचमें ठीक बनती है।

न्यग्रोधपरिमडल नामकर्मके उदयसे जीवका शरीर बडके पडकी तरह होता है अर्थात् नाभिसे नीचेके भाग छोटे और ऊपरके बडे होते हैं।

स्वातिसस्थान नामकर्मके उदयसे शरीरकी शकल पहलेसे बिलकुल उलटी होती है यानी नाभिसे नीचेके अग बडे और ऊपरके छोटे होते है।

कुब्जकसस्थान नामकर्मके उदयसे शरीर कुबडा होता है।

वामनसस्थान नामकर्मके उदयसे शरीर बौना होता है।

हुडकसस्थान नामकर्मके उदयसे शरीरके अगोपाग किसी खास शकलके नहीं होते हैं। कोई छोटा कोई बडा, कोई कम, कोई ज्यादह होता है।

६ सहनन (वज्रर्षभनाराचसहनन, वज्रनाराचसहनन, नाराचसहनन, अर्द्धनाराचसहनन, कीलकसहनन, असप्राप्ता-सृपाटिकासहनन)—इस नामकर्मके उदयसे हाडोंका बधन-विशेष होता है।

वज्रर्षभनाराचसहनन नामकर्मके उदयसे वज्रके हाड वज्रके बटन और वज्रकी कीलिया होती हैं।

वज्रनाराचसहनन नामकर्मके उदयसे वज्रके हाड वज्रकी

कीली होती हैं, परन्तु बेठन वज्रके नहीं होते हैं।

नाराचसहनन नामकर्मके उदयसे हड्डियोंमें बेठन और कीलें लगी होती हैं।

अर्द्धनाराचसहनन नामकर्मके उदयसे हड्डियोंकी सधिया आधी कीलित होती हैं यानी एक तरफ तो कीलें लगी होती हैं परन्तु दूसरी तरफ नही होती।

कीलकसहनन नामकर्मके उदयसे हड्डियोंकी सधियां कीलोंसे मिली होती हैं।

असप्राप्तासृपाटिकासहनन नामकर्मके उदयसे जुदी जुदी हड्डिया नसोंसे बधी होती हैं, उनमें कीलें नहीं लगी होती हैं।

८ स्पर्श (कडा, नर्म, हलका, भारी, ठडा, गरम, चिकना, रूखा)—इस नामकर्मके उदयसे शरीरमे कडा, नर्म, हलका भारी वगैरह स्पर्श होता है।

५ रस (खट्टा, मीठा, कडवा, कषायला, चर्परा) इस नामकर्मके उदयसे शरीरमे खट्टा मीठा वगैरह रस होते है।

२ गध (सुगध दुर्गंध)-इस नामकर्मके उदयसे शरीरमे सुगध या दुर्गंध होती है।

५ वर्ण (काला, पीला, नीला, लाल, सफेद)—इस नामकर्मके उदयसे शरीरम काला, पीला, वगरह रग होते हैं।

४ आनुपूर्व्य (नरक, तिर्यच, मनुष्य, देव)-इस नाम कर्मके उदयसे विग्रहगतिम यानी मरनेके पीछे और जन्मसे

पहले रास्तेमें मरनेसे पहलेके शरीरके आकारके आत्माके प्रदेश रहते हैं।

१ अगुरुलघु—इस नामकर्मके उदयसे शरीर न तो ऐसा भारी होता है जो नीचे गिर जावे और न ऐसा हलका होता है जो आककी रुईकी तरह उड जावे।

१ उपघात—इस नामकर्मके उदयसे ऐसे अंग होते हैं जिनसे अपना घात हो।

१ परघात—इस नामकर्मके उदयसे दूसरेका घात करनेवाले अंगोपाग होते हैं।

१ आताप—इस नामकर्मके उदयसे आतापरूप शरीर होता है।

१ उद्योत—इस नामकर्मके उदयसे उद्योतरूप शरीर होता है।

१ विहायोगति (शुभ अशुभ)—इस नामकर्मके उदयसे जीव आकाशमें गमन करता है।

१ उच्छ्वास—इस नामकर्मके उदयसे जीव श्वास और उच्छ्वास लेता है।

१ त्रस—इस नामकर्मके उदयसे दो इन्द्रिय आदि जीवोंमें जन्म होता है अर्थात् दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय, अथवा पाच इन्द्रिय होता है।

स्थावर—इस नामकर्मके उदयसे पृथिवी, जल, अग्नि, वायु अथवा वनस्पतिमें अर्थात् एकइन्द्रियमें जन्म होता है।

गोत्र कर्म।

गोत्र कर्मके २ भेद हैं.–१ उच्चगोत्र २ नीचगोत्र।

उच्च गोत्र उसे कहते हैं जिसके उदयसे जीव लोकमान्य ऊँच कुलमें पैदा हो।

नीच गोत्र उसे कहते हैं जिसके उदयसे जीव लोकनिंदित अर्थात् नीचे कुलमें पैदा हो।

अन्तराय कर्म।

अतराय कर्मके ५ भेद हैं–१ दानअतराय, २ लाभअतराय, ३ भोगअतराय, ४ उपभोगअतराय, ५ वीर्यअतराय।

दानअतरायकर्म उसे कहते हैं जिसके उदयसे यह जीव दान न दे सके।

लाभअतरायकर्म उसे कहते हैं जिसके उदयसे लाभ न हो सके।

भोगअतरायकर्म उसे कहते हैं जिसके उदयमे अच्छे पदार्थोंका भोग न कर सके।

उपभोगअतरायकर्म उसे कहते हैं जिसके उदयमे जेवर कपडा वगैरह चीजोंका उपभोग न कर सके।

वीर्यअतरायकर्म उसे कहते हैं जिसके उदयसे शरीरमें सामर्थ्य यानी बल और ताकत न हो।

प्रश्नावली।

१ कर्म किसे कहते हैं? कर्मकी मूल और उत्तर प्रकृतिया कितनी हैं?

? क्या [illegible] कर्मकी हैं और सबसे कम

३ अवधिज्ञान, अचक्षुदर्शन, सम्यग्दर्शन, संहनन, संस्थान, अगुरुलघु, आहारक शरीर, जुगुप्सा, सम्यक्प्रकृति, प्रचला-प्रचला, विग्रहगति, मतिज्ञान, नोकषाय, आनुपूर्व्य, साधारण, अनादेय, इनसे क्या समझते हो ?

४ सुभग, अस्थिर, नाराचसंहनन, स्वातिसंस्थान, वीर्यान्तराय, तीर्थंकर, अप्रत्याख्यानकषाय, स्त्यानगृद्धि, इन कर्मप्रकृतियोंके उदयसे क्या होता है ?

५ संस्थान और संहनन किस किसके होते हैं ? नीचे लिखे हुओंके संस्थान संहनन हैं या नहीं, अगर हैं तो कौन कौनसे ? देव, कुबड़ा मनुष्य, स्त्री, राममूर्ति, मच्छी, शेर, साप, नारकी, मक्खी।

६ ऐसे कर्म बतलावो जिनकी प्रकृतियोंपर ९ का भाग पूरा पूरा चला जाय ?

७ नाम कर्मकी ऐसी प्रकृतिया बताओ जो एक दूसरेसे उलटी हैं ?

८ निम्न लिखित प्रकृतियोंका उदय किन किनके होता है ? समचतुरस्रसंस्थान, अपर्याप्ति।

९ नीचे लिखे हुए प्रश्नोंके उत्तर दो —

(क) तुम पचेंद्रिय क्यों हुए ?

(ख) लोगोंको नींद क्यों आती है ?

(ग) हमको अवधिज्ञान क्यों नहीं होता ?

(घ) सम्यग्दर्शन कबतक नहीं होता ?

(ङ) सब मनुष्य कुबड़े और बौने क्यों नहीं होते ?

(च) हम आकाशमें क्यों नहीं चल फिर सकते ?

(छ) देव अपना शरीर छोटा बड़ा कैसे कर सकते हैं ?

(ज) हमको तमाम चीजें क्यों नहीं दिखलाई देतीं ?

(झ) हम हर [illegible] जा सकते ?

१० बताओ इनके किस किस कर्मप्रकृतिका उदय है ?

(क) सोहन पढ़ते पढ़ते सो जाता है।
(ख) जयदेवी बड़ी डरपोक है।
(ग) गोविंद बहरा गूंगा और अंधा है।
(घ) राममूर्ति बड़ा मोटा ताजा पहलवान है।
(ङ) राम सदा रोगी रहता है।
(च) मोहनसे सब ग्लानि करते हैं।
(छ) दूरदत्त लखपती होनेपर भी किसीको एक पैसा तक नहीं देता, बड़ा कंजूस है।
(ज) कालू भंगीके घर पैदा हुआ है।
(झ) देवी कुबड़ी है उसका भाई बौना है।
(ञ) देव आकाशमें गमन करते हैं।
(ट) गुलाब बहुत अच्छा गाता है, उसका स्वर अच्छा है।
(ठ) गोपाल बड़ा भारी पंडित है हर जगह लोग उसकी तारीफ करते हैं।
(ड) हरि बहुत हंसता है, पर उसकी बहिन बहुत रोती है।
(ढ) मेरे अंगोपांग सब ठीक हैं।
(ण) गंगारामका सर लम्बोतरा, नाक चपटी और आंखें अंदरको दबी हुई हैं।
(त) लाल अपने भाई पालको बहुत प्यार करता है।